

लालबहादुर शास्त्री

शोष्ययित्तुदय



रामप्रसाद एण्ड सस • आगरा

प्रकाशक
रामप्रसाद एण्ड सन
अस्पताल रोड
आगरा

तीन रुपया पचास बीसे

मुद्रक
भारत मुद्रणालय
आम्बेकरा-दिल्ली १९

दो शब्द

मैं इसे धपना सीनाम्य ही मानता हूँ कि मेरी प्रवृत्ति विश्व के बन्धनीय महान् पुरुषों और मताओं की जीवन-कथाओं को पढ़ने और उनके संकलन की ओर नहीं है। अब तक मैं विश्व के पचीसवों भाषकों के जीवन चरित्रों और उनकी विविष्टताओं के पावन-जल से अपनी लेखनी को पवित्र बना सका हूँ। मेरी उसी प्रवृत्ति के माननीय लामबहापुर शास्त्री जी के चरित्रांकन के लिए भी मुझे प्रेरणा की है। हो सकता है अपने मन के विकारों के कारण कुछ लोगों को इस काय में भी 'विकार' की गंध मिले पर मुझे तो उनकी विविष्टताओं के संकलन से पूर्व संतोष ही है। क्योंकि उनसे देख के उन लाखों-करोड़ों युवकों को प्रेरणा मिलेगी, जो निराशा के संघकार में चटक रहे हैं।

फिर भी मैं यह कहूँगा कि मेरा यह प्रयास सधु है—बहुत ही लघु है। क्योंकि शास्त्री जी का जीवन उन राजनीतिक और सामाजिक घटनाओं से घोटघोट है, जो पिछले ३०-४० वर्षों से हमारे देश में बटी हैं और बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। मैंने शास्त्री जी से प्रार्थना की है कि वे स्वयं अपने जीवन की कहानी लिखें। पता नहीं शास्त्री जी मेरे निवेदन पर ध्यान देंगे या नहीं। घट उनके प्रविष्ट मित्रों से भी मेरी यही आशा है कि वे शास्त्री जी से अनुरोध करें, कि वे अपना जीवन बतल लिखें। उनके जीवन कृत के पिछले ३०-४० वर्षों का इतिहास और राष्ट्रमात्रकों का चरित्र तो व्यक्त होना ही चाय ही उससे समाज और राष्ट्र को प्रेरणा भी मिलेगी।

मैं अपने इस प्रयास की सचस मार्जुवा यदि माननीय शास्त्री जी और उनके मित्र मेरे इस निवेदन पर ध्यान देंगे।

ए २६, बंसाल कासीनो

नई दिल्ली १४

६ अक्टूबर १९६४

श्रीव्यवित्तद्वय

व्यक्तित्व

गौरवर्ण, छोटा कद, चौड़ा मुँह-मण्डल, प्रचस्त नास और मुस्कराते हुए मोठ ! जो भी घास्त्री जी को देखता है उस पर उनके व्यक्तित्व की पूरा छाप पड़ जाती है । उनके व्यक्तित्व में, कृत्रिमता नहीं, सरसता है । सड़क-मटक और घान-शोकत का धारण नहीं, मनुष्य के लिए—सहृदय और बिचारशील मनुष्य के लिए एक गहरा सिखाव है । उनकी घासीनता, और बिगड़ता धपनों को ही नहीं, परायों को भी बिमुग्ध कर लेती है । वे बोसन में—मिसने में बड़े रस सिक्त हैं । कड़ी से कड़ी बात को भी धय के साथ—हंसते हुए सुनना उन्हें आता है ।

विरोधों की मझी-कदकतियों की बीछार में भी उनकी आकृति पर क्रोध के चिह्न दुष्टिगोचर नहीं होते। इसका यह तात्पर्य नहीं कि वे अपने सभी विरोधियों को मूल जाते हैं पर यह सत्य है कि विरोधियों द्वारा उत्पन्न किए गए घावों में भी वे उबसते हुए नहीं देखे गए।

उस दिन का विष आज भी मेरी धारों के सामने है। रात के नौ-साढ़ नौ बज रहे थे। शास्त्री जी अपने चुनाव क्षेत्र में, कटरा चौरास्ते पर (इलाहाबाद), भाषण दे रहे थे। काफ़ी भीड़ थी। लाल टोपीधारी सौ-उड़ सौ युवकों का दल सभा के बाहर खू रहकर हंगामा मचा रहा था। उस हंगामे में—उस क्षोर-गुल में भी शास्त्री जी बड़े वय के साथ कांग्रेस की योजनाओं का चित्र जनता के समक्ष उपस्थित कर रहे थे। उस समय तो शास्त्री जी का धैर्य पराकाष्ठा को पहुँच गया जब सहसा उक्त युवक सभा में प्रविष्ट हो गए और प्रयत्न करने लगे कि सभा भंग हो जाए। कांग्रेस के सहस्रों समर्थक भी घापे से बाहर हो गए। पर शास्त्री जी के बेहरे पर रंघमात्र भी क्रोध न उमड़ा। वे सील की भाँति अपने स्थान पर बड़े रहे। शास्त्री जी ने उन मुबकों को अपनी धालीनता— अपनी विनम्रता के रज्जू में इस प्रकार बाँधा कि वे सज्जित हो उठे, और अपने कुर्य पर दुस प्रकट करके सभा से चले गए।

शास्त्री जी उन दिनों भारत सरकार के गृह-मंत्री पद पर धालीन थे। उनके हाथ में पुलिस और धासन की धक्ति थी।

वे चाहते तो पुलिस अधिकारियों को संकेत करके उन युवकों को दण्डित करा सकते थे, पर शास्त्री जी उनकी सहृदयताओं को पी गए। सभा की समाप्ति पर, व एच साहब टोपीधारी युवक की पीठ थपथपाते हुए बोले— 'बह खोसीले हो !

और दूसरे दिन मैंने उन विरोधी युवकों को कहते हुए सुना— 'शास्त्री जी, शास्त्री जी की भाकृति पर रघुमान भी क्रोध नहीं प्रकट हुआ।'

महान् उन्नति के सफल यात्री

कितने ही ऐसे अवसरों पर शास्त्री जी की शासीनता की प्रकृष्टता देखने को मिली है। ऐसे अवसरों पर प्रायः बड़े-बड़े सभ्य और महान् पुरुषों को भी क्रोध के भावों में तब-तब हुए देखा गया है। तो क्या शास्त्री जी के हृदय में सत्ता की विवेन्द्रियता और महान् पुरुषों की महानता है? भवदम ! शास्त्री जी के इन्हीं मुर्खों ने तो उनके लिए—उस पद पर पहुँचने के लिए निसेमी का काम किया है जिसे प्राप्त करने के लिए साग ऐड़ी-भोटी का पसीना एक करते हैं। भारत ऐसे महान् और विचित्र देश के प्रधान मन्त्रिस्व का पद ! वह पद, जिसे विश्व-पुष्प थी नेहरू मुसोमित कर चुके हैं और जिसकी धाक समार के बड़े-बड़े देशों के ऊपर भी जम चुकी है उसे—उस महान् पद को शास्त्री जी ने बिना किसी प्रयास के ही प्राप्त कर लिया ! कांग्रेस की संसदीय पार्टी ने उनके गुणों—केवल

उनके गुणों पर रीझकर उन्हें अपना नेता निर्वाचित किया। यदि शास्त्री जी में विशिष्टताएँ न होतीं, तो इस प्रपञ्चमय आडम्बरी राजनीति में कौन ऐसा है, जिसका ध्यान शास्त्री जी की ओर आकर्षित होता ?

क्योंकि शास्त्री जी के पास न तो सम्पत्ति है और न उनका जन्म ही किसी बड़े वंश में हुआ है। वे अपनी विशिष्टताओं को छोड़कर सब प्रकार से साधारण हैं—बहुत ही साधारण हैं। ऐसे ही और भी कई साधारण व्यक्ति अपने असाधारण गुणों से उन्नति के शिखर पर पहुँच सके हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के जीवन पर दृष्टि डालिए। क्या यह सच नहीं है कि लिंकन का सांसारिक जीवन बहुत ही साधारण था और क्या यह भी सच नहीं है कि लिंकन ने अपने असाधारण गुणों से ही उस महान् पद को प्राप्त किया, जिसे प्राप्त करने के लिए लोगों को कई प्रकार का असीरत प्रयास करना पड़ता है ? तो क्या शास्त्री जी लिंकन के ही पंथानुयायी हैं ? क्या वे लिंकन की ही राह पर चलकर उन्नति कर सके हैं ? संभव है कुछ लोगों को इसमें शक्यता की गंध भिसे पर यह तो सत्य ही है कि शास्त्री जी लिंकन के समान ही, केवल अपनी विशिष्टताओं से भारत ऐसे महान् देश के प्रधान मन्त्रित्व के सिंहासन पर आसीन हो चुके हैं।

१८

शास्त्री जी की गौरवपूर्ण उन्नति हमारे भाँसों के सामने प्रतापुर्क कामास पाशा का चित्र भी खींच देती है। कितने ज्ञात

या कि एक पुढसाक में जन्म लेने वाला यासक कमान कमी टर्की का अधिनायक होगा ? किसे पता था कि गरीब विधवा का पुत्र कमान, जिसकी मासिक आय केवल भाठ रुपए है, कभी सूर्य की किरणों की तरह ससार में अपना प्रकाश बिखेर देगा ? इसी प्रकार किसे यह ज्ञान था कि मुगलसराय में एक साधारण कायस्थ बच्चे में जन्म लेने वाला बालक भारत का प्रधान मंत्री होगा ? किसे पता था कि काशी के हरिदचन्द्र हाई स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने वाला एक विद्यार्थी, जिसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कठिनाइयों के साथ होती है एक दिन बिपव के महान् राजनीतियों की पक्ष में आ बठेगा ? तो क्या शास्त्री जी कमान पासा के सदृश महान् हैं ? निश्चय शास्त्री जी ने कमान पासा की भाँति ही उन्नति के शिखर पर चढ़ने में अपनी विशिष्टता प्रदर्शित की है। समझ है भारत में शास्त्री जी की विशिष्टताओं की घोर अधिकांश लोगों का ध्यान आकर्षित न हो, पर निश्चय है कि यदि शास्त्री जी ने बिदेसों में जन्म लेकर इस महान् पद को प्राप्त किया होता तो सिक्क कमान और कनेडी की भाँति ही उन्हें भादर और सम्मान मिलता।

नेहरू जी की पैनी वृष्टि

तो फिर कहना ही पड़ेगा कि स्वर्गीय श्री नेहरू जी बड़े दूरदर्शी और पैनी वृष्टि के व्यक्ति थे। आज से पच्चीस-तीस वर्ष पूर्व जब शास्त्री जी नेहरू जी के सम्पर्क में आए थे, तो वे बनेने

ही नहीं थे । उन्हीं के समान कितने प्रयागवासी युवक कांग्रेस कायकर्ता भी उनके साथ थे । शास्त्री जी और वे सभी लोग कांग्रेस के कार्यक्रमों को पूर्ण करने के लिए प्रायः श्री नेहरू जी के साथ गाँवों में दौरे किया करते थे । जुमूसों में, सभाओं में भी प्रायः उन सबका और श्री नेहरू का साथ रहता था । पर नेहरू जी ने सबको छोड़कर, उनमें से केवल शास्त्री जी को ही अपना प्रमुख स्नेहपात्र बनाया । यद्यपि शास्त्री जी इसाहाबाद में 'प्रवासी' थे—किराये के मकान में रहते थे पर उनमें कांग्रेस के प्रति जो सम्यक्ता जो निष्ठा और जो कमप्यता थी, उसकी ओर नेहरू जी धारकपित हुए बिना न रहें । उन्होंने शास्त्री जी के लिए अपने हृदय का द्वार खोल दिया । ज्यों-ज्यों शास्त्री जी की विशिष्टताएँ निखरने लगीं—ज्यों-ज्यों उनकी कार्य-कृत्तमता सामने आने लगी, वे नेहरू जी के हृदय में अभिजातिक स्वान पाते गये और ऐसा क्षण भी आया, जब श्री नेहरू द्वारा विवेक मध्याह्न का कार्य संपि आने पर बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ भी घटके समाने गये कि श्री नेहरू के पश्चात् श्री सातवहादुर शास्त्री ही भारत के प्रधान मंत्री होंगे ।

श्री नेहरू के जीवन काल में प्रायः भोग उनसे यह प्रश्न करते थे कि उनके पश्चात् उनका 'उत्तराधिकारी' कौन होगा ? श्री नेहरू लोगों के इस प्रश्न को सुनकर बड़े कौत्स से हास आया करते थे । क्योंकि वे धर्म्य प्रजातन्त्रवादी थे

घोर उनका 'उत्तराधिकार' ब्रैसी वस्तु में विस्वास नहीं था। किन्तु फिर भी उन्होंने शास्त्री जी को विदेश मन्त्रालय का काय सौंपकर उनकी योग्यता और सवप्रियता पर मुहर लगा दी। कहा जाता है कि निम्नो रूप में उनकी धपनी यही इच्छा थी कि यदि उनके पदचात् शास्त्री जी को ही प्रधान मंत्री के रूप में वरण किया जाए, तो अधिक अच्छा हो।

नेहरू जी के आकर्षण का कारण

प्रस्तन हो सकता है कि शास्त्री जी में ऐसी कौनसी विधि-प्यता है जिसने श्री नेहरू जी के मन को बाँध लिया था। हो सकता है इस विषय में मतभेद हो, पर हमारी समझ में उन विधिप्यताओं को इस प्रकार स्मरण किया जा सकता है— परिधमणीसता, विद्यास राष्ट्रीय वृष्टिबोध और अद्भुत सूझ-बूझ। श्री नेहरू के जीवन-दर्शन का भी यही सार है। श्री नेहरू न अपने जीवन-दर्शन की सुला पर ही शास्त्री जी को तोला था, और उन्हें सर्व प्रकार से उपयुक्त और अनुमूल पाने पर ही धपना स्नेह ही नहीं, बल्कि धपने पद का कायभार भी उनके कंधों पर ढाल दिया था। शास्त्री जी श्री नेहरू के सबसे अधिक निकटवर्ती थे, वे जिस बात को किसी पर प्रकट नहीं करते थे, उसे वे बिना हिचक के शास्त्री जी से कह दिया करते थे। वे प्रायः बड़ी-बड़ी समस्याओं पर, पेशीदा मामलों पर, शास्त्री जी को सलाह लिया करते थे। शास्त्री जी

की सप्ताह उन्हें जँघती थी—पसन्द थी ! कांग्रेस पार्टी में ऐसे बहुत से लोग थे, और हैं, जिन्हें श्री नेहरू जी का यह कार्य प्रमत्ता न लगता था पर फिर भी श्री नेहरू शास्त्री जी को अपना हार्दिक स्नेह, और अपनी हार्दिक सहानुभूति देने में न हिचकते थे । श्री नेहरू शास्त्री जी की ओर से पूर्ण आश्वस्त थे । उनको विशिष्टताओं ने उन्हें भरोसा दिला दिया था कि भारत का भविष्य शास्त्री जी के नेतृत्व में सुरक्षित है ।

यह सच है कि शास्त्री जी में विशिष्टताएँ हैं, यह सच है कि उनकी विशिष्टताओं ने ही उनके गौरव-सिद्धर के लिए निखेनी का काम किया है पर यह भी सच है कि शास्त्री जी इस सम्बन्ध में बड़े सौभाग्यशाली हैं, जो उन्हें श्री नेहरू जी जैसे जीहरी के सम्पर्क में आने का सुप्रसन्न प्राप्त हुआ । शास्त्री जी के “गुण-शोष” की परत के पश्चात् उन्हें लोगों के समक्ष उपस्थित करने का ज्ये एकमात्र श्री नेहरू जी को ही है । श्री नेहरू ने शास्त्री जी के गुणों को लोक के समक्ष उपस्थित ही नहीं किया बरन् उनको प्रमुक्त व्याख्या करके उन्हें और भी अधिक गौरवान बना दिया । यह श्री नेहरू जी का ही काम था कि वे राजनीति के हाट में, जहाँ बड़ी भीड़ माड़ थी, शास्त्री जी को छाँट पाए, और कितने ही स्वानों से निकालते हुए उस स्थान पर ले गए, जहाँ घाम वे हैं ! यही तो कारण है कि शास्त्री जी अपने इस कुसल जीहरी के नियम पर अपना नाम की भाँति विसर पड़े थे । प्रयाग में बिबेयी का पवित्र

तट । श्री नेहरू के अस्पि-विसर्जन के पश्चात् दिवंगत आत्मा का शास्त्रि के लिए शोक सभा का आयोजन हुआ । शास्त्री जी भी आसने के लिए खड़े हुए । दो बार ही शब्द बोझ पाए थे कि उनका कंठ अचानक ही उठा । जिसने उनकी वह सिसकी सुनी होगी उसे सहज में ही उनकी वेदना का अनुभव हो सकता है । इतना ही नहीं श्री नेहरू के निधन के पश्चात् उनका हृदय कुशाब्ध से इतना घायल हो उठा कि उन्होंने ज्वर से चारपाई पकड़ ली ।

श्री नेहरू और शास्त्री का स्नेह सूत्र

शास्त्री जी की नेहरू जी के सम्पर्क में आने की कहानी भी बड़ी स्मरणीय है । कदाचित् १९३० के दिन थे । आंदोलन की आँधी जारों पर थी । इसाहाबाद में भी सभाओं और जुलूसों की धूम थी । रविवार का दिन था । थोमस विजयलक्ष्मी पंडित, कमला नेहरू और स्वरूपरानी के मतृत्व में एक बड़ा पुत्रुम भ्रष्टाचार से सिविल साइन की धार बना । पचासों हजार लोग जुलूस में सम्मिलित थे । शास्त्री जी और उनकी माता भी जुलूस में थीं । पर जुलूस सिविल साइन में प्रविष्ट नहीं हो सका । पुरुषोत्तमदास पाक के बीराहे पर ही मुड़सवारों की पंक्ति ने जुलूस को रोक दिया । जुलूस के लोग भी वहीं जमकर बैठ गए । आगे की पंक्ति में स्थियाँ थीं, जिनमें स्वरूपरानी नेहरू, कमला नेहरू और विजयसदमी पंडित आदि मुख्य थीं ।

रह रहकर गगनभेरी नारे सम रहे थे। ऐसे नारे, जो बूझों के पत्तों की नसों में भी सिहरन उत्पन्न कर देते थे। सहसा पुलिसमैनों के हार्वा में भी सिहरन हुई और वे डण्डे धसाने लग गये। कितने ही लोग पुलिस के डण्डों से घ्राह्य हुए। घ्राह्य होने वालों में श्री नेहरू जी की माता जी स्वरूपरानी नेहरू, मुख्य थीं।

स्वरूपरानी नेहरू के घ्राह्य होने पर शास्त्री जी और उनके कुटुम्बियों ने उनकी सेवा में अथर्व तन्मयता प्रकट की। श्री नेहरू उनकी तन्मयता और कार्य-समन्वयता को देखकर विमुग्ध हो उठे। यद्यपि इसके पूर्व भी शास्त्री जी के सम्पर्क में आ चुके थे पर वही बहू दिन था जब शास्त्री जी और नेहरू जी के बीच में पारिवारिक स्नेह ने अन्त लिया। इस घटना के पश्चात् शास्त्री जी आनन्द भवन में आने-जाने लगे। धीरे-धीरे वे आनन्द भवन के सदस्यों के एक भग्न बन गए। श्री नेहरू भी समय-समय पर, आवश्यकता पड़ने पर श्री शास्त्री जी के घर पर आने से न हिचकते थे। विवाह-आदियों और उत्सवों में, वे अपने महत्त्वपूर्ण कार्य-क्रमों को छोड़कर शास्त्री जी के निवास-स्थान पर उपस्थित हुआ करते थे। श्री नेहरू शास्त्री जी की ईमानदारी और सच्चाई से असी-आँति परिचित थे। वे जानते थे कि श्री शास्त्री जी अपने कुटुम्बियों को अभावों की भाँगी में मूलसते हुए देख सकते हैं पर शासन-सूत्र हाथ में होने पर भी कभी अनुचित हृदय नहीं उठा सकते। अतः श्री नेहरू

जी को शास्त्री जी के कुटुम्बियों का सदा ध्यान रहता था, और वे उनके बच्चों के भविष्य की चिन्ता भी किया करते थे। कहा जाता है कि शास्त्री जी के पुत्र श्री हरेकृष्ण को इन्जीनियरिंग की शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड भेजने में श्री नेहरू जी का ही हाथ था। यदि श्री नेहरू का हाथ न होता तो शास्त्री जी के लिए यह बात असंभव न होती कि वे यह सोचते रह जाते कि मैं अपने मजिदाल में अपने बच्चे को इंग्लैण्ड किस प्रकार भेजूँ—सोग सुनेगे तो क्या कहेंगे ?

नेहरू के जीवन-दर्शन के प्रमुख समयक

श्री शास्त्री श्री नेहरू के 'जीवन-दर्शन' के प्रतिरूप हैं। नेहरू जी के सिद्धांतों और भावनों का उन्होंने मथन ही नहीं किया है बरन् उनके सचि में अपने को ढाला है। यदि यहाँ यह भी कहा जाए, तो पर्युक्ति की बात न होगी, कि नेहरू जी की कई विविष्टियाँ शास्त्री जी में भी हैं, जो उनकी अपनी सम्पत्ति हैं। संयोग से श्री नेहरू और शास्त्री जी के नाम के अक्षरों में भी समानता है—अबाहरनाम और सातवहादुर। आस्थावस्था में श्री नेहरू और शास्त्री जी का एक ही नाम था—'नर्ह'। दोनों का जन्म यद्यपि एक-दूसरे से दूरवर्ती स्थान में हुआ था, पर प्रयाग में दोनों एक-दूसरे से गंगा और यमुना की भाँति ही स्नेह-सूप में घायल हो उठे थे। धार्मिक दृष्टिकोण से भी दोनों में अन्तर था। इस दृष्टि से एक को

योऽकृष्ण घोर दूसरे को सुनामा कहमा अनुपयुक्त न हागा । जिस प्रकार योऽकृष्ण और सुषामा का सम्मिसन सांदीपन ऋषि के माथम में हुआ था उसी प्रकार भारद्वाज माथम की छाया में ही थी नेहरू और शास्त्री जी के पारस्परिक स्नेह को पस्सबिस और पुष्पित होने का भवसर प्राप्त हुआ है । ऐसा सगता है प्रकृति की घोर से ही दोनों पारस्परिक स्नेह सद्भावना त्याग, और सौहाद मेकर भरती पर धाये हैं । मैं इस बात को भी प्रकृति की प्रेरणा ही मानता हूँ कि शास्त्री जी नेहरू जी के सम्पर्क में आए और उनकी प्रीति तथा स्नेह के भाजन बने । नहीं तो जब शास्त्री जी प्रयाग में आए तो उनका नेहरू जी की अपेक्षा राजपि टण्डन से अधिक सम्पर्क था । शास्त्री जी उस पोपुल्स सांसाइटा के भी सदस्य थे, जिसने सचालन में टण्डन जी का मुख्य हाथ था । राजनीतिक कार्यों में भी उन्हें टण्डन जी से अधिक प्रोत्साहन प्राप्त होता था । कारावास की यात्रा करने पर टण्डन जी के द्वारा ही उनके परिवार की देख-रेख भी हाती थी । प्रयाग के लोगों को प्रायः यह बात मानूम है कि टण्डन जी का शास्त्री जी पर पितृवत् स्नेह था । पर यह प्रकृति की ही प्रेरणा थी कि शास्त्री जी नेहरू जी के सर्वाधिक सम्पर्क में आ गए । इतने सम्पर्क में आ गए कि राजपि के स्नेह का भयस उनसे छुट गया । यद्यपि शास्त्री जी ने कभी राजपि का बिरोध न किया, पर यह तो सत्य ही है कि उन्होंने अपने हृदय से ही नेहरू का छाथ किया, उनके

सिद्धान्तों को ग्रहण किया, और उनके प्रचार और प्रसार में ऐसी घोटी का पसीना एक किया। फिर यह कहने में सकोच नहीं हो सकता कि श्री सास्त्री नेहरू जी के जीवन-दर्शन के अनन्य समर्थक हैं।

इसका प्रमाण एक और बात से मिलता है। श्री नेहरू जी के निधन के पश्चात् यों तो सम्पूर्ण भारत ही शोक-सागर में निमग्न हो उठा था पर सबसे अधिक पीड़ा उन भस्पसक्यों को हुई थी जो नेहरू जी की 'छत्रछामा' को अपने लिए धरदार मानते थे। नेहरू जी के निधन के पश्चात् वे प्रायः इस बात का लेकर संकल्प विकल्प करने लगे थे कि देखें, अब कौन किस करवट बैठता है। इतना ही नहीं, उनके मन में आशाकाएँ भी उत्पन्न होने लगी थीं। पर जब सास्त्री जी का नेता के रूप में निर्वाचन हुआ, तो उनका मन आशा की ज्योति से उद्दीप्त हो उठा। ऐसा लगा, जैसे सास्त्री जी के रूप में उन्हें फिर श्री नेहरू मिल गए हों। भस्पसक्यों के प्रायः सभी नेताओं और उनके समाचार पत्रों ने सास्त्री जी के चुनाव पर आतिशय हृष्य प्रकट किया। यदि एक समाचार पत्र की कुछ पंक्तियों को मैं यहाँ उद्धृत करूँ तो अनुचित न होगा—कांग्रेस की सप्तमीय पार्टी ने श्री नेहरू के उत्तराधिकारी के रूप में श्री सास्त्री का निर्वाचन करके अपनी बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता का परिचय दिया है। श्री सास्त्री कांग्रेस कमिटी में सबसे अधिक नेहरू जी के स्नेह-भाजन रहे हैं। इसका एकमात्र कारण है श्री

नेहरू के उसूनों के प्रति उनकी सभार्ई और निष्ठा । इस बात में किसी को कुछ भी सम्वेह नहीं हो सकता कि श्री सास्त्री नेहरू जी के निधन के पदधात भी उनके उसूनों में उसी प्रकार निष्ठा रखेंगे जिस प्रकार पहले रखते थे ।

आराम हराम

गास्त्री जो बड़े परिश्रमी और अध्यवसायी हैं। नेहरू जो के जीवन-दर्शन का सिद्धांत, 'आराम हराम है', उनका अपना धर्म है। वे बाल्यावस्था से ही परिश्रम और अध्यवसाय के मार्ग पर चलते चले आ रहे हैं। उन्होंने बाल्यावस्था में जिस परिश्रम और सगल के साथ शिक्षा प्राप्त की, वह आज के युवकों के लिए—विद्यार्थियों के लिए शिक्षा ग्रहण करने की वस्तु है। न ठाठ-भाट, न धामोद प्रमोद, और न व्यर्थ वाद विवाद। बेबल पढ़ने से तात्पर्य, अध्ययन से सगाव। पैदल स्कूल जाते थे, और अब तक स्कूल में रहते थे, बेबल पढ़ने सिखने से ही

नेहरू के उसूलों के प्रति उनकी सच्चाई और निष्ठा । इस बात में किसी को कुछ भी सन्देह नहीं हो सकता कि श्री शास्त्री नेहरू जी के निधन के पश्चात् भी उनके उसूलों में वसी प्रकार निष्ठा रखेंगे जिस प्रकार पहले रखते थे ।

आराम हराम

छान्त्री जो बड़े परिश्रमी और अध्यवसायी हैं। नेहरू जो के जीवन-अधन का सिद्धान्त, 'आराम हराम है', उनका अपना मत है। वे बाल्यावस्था से ही परिश्रम और अध्यवसाय के मार्ग पर चलते चल आ रहे हैं। उन्होंने बाल्यावस्था में जिस परिश्रम और सयन के साथ विद्या अर्जित की, वह आज के युवकों के लिए—विद्यार्थियों के लिए शिक्षा ग्रहण करने की वस्तु है। न टाठ-बाट, न आमोद प्रमोद, और न व्यथ वाद विवाद ! केवल पढ़ने से तात्पर्य अध्ययन से मगाव ! पैदल स्कूल जाते थे और जब तक स्कूल में रहते थे, केवल पढ़ने-लिखने से ही

सरोकार रक्त वे । घर पर भी व्यर्थ के कार्यों में समय नष्ट नहीं करते थे । प्राय कोई न कोई अच्छी पुस्तक पढ़ने में ही अपना समय व्यतीत करते थे । शास्त्री जी की माता के निम्नांकित शब्दों से उनके बाल्य और विद्यार्थी जीवन का मध्यवसायी चित्र पर्याप्त रूप में भाँसों के सामने चित्रित हो जाता है—

नन्हें अपने मौसा रघुनाथ प्रसाद के घर दारानगर (वाराणसी) में रहते थे । वहीं रहकर वे पढ़ते थे । यद्यपि उनके मौसा का उन पर अपार स्नेह था पर इस स्नेह के मूस में थो मन्हें की परिश्रमशीलता, पढ़ने-लिखने में उसकी तामयता और धारण की साधुता ! 'नन्हें' ने कभी अपने गुरुजनों को शिकामत करने का मबसर नहीं दिया । वे स्कूल में और घर पर भी अपना सारा काम बड़े परिश्रम से पूरा करते थे ।'

शास्त्री जी के सहपाठी श्री त्रिभुवननारायणसिंह की निम्नांकित पंक्तियाँ उनकी परिश्रमशीलता और कमळता का चित्र उपस्थित करने में बेबाक हैं— वह सत्यनिष्ठ ही नहीं बड़े ही कर्मठ मयक काम करने वाले तपोनिष्ठ व्यक्ति भी हैं । सन् ११ १६ की बात है वह उत्तर प्रदेश काँग्रेस कमेटी द्वारा स्थापित उत्तर प्रदेश मूमि सुधार कमेटी के मंत्री थे और बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन उसके समापति । उस कमेटी में जिस परिश्रम से उन्होंने रात-दिन काम किया, उसके दर्शन उन लोगों ने किये होंगे, जो उस समय शास्त्री जी के साथ रहे । वह रात दिन उस कमेटी के सम्बन्ध में कुछ-न

कुछ सिल्लते-पकूते रहते थे । रात को ११ १२ तक बज जाते थे, लेकिन उनका काम शरम नहीं होता था । तब मैं और दास्त्री भी उस समय साय ही रहते थे । मेरी एक छोटी मशीनी ने एक दिन मुझसे पूछा— 'बाबा, दास्त्री जी दिन रात इतना काम क्यों करते हैं ? इतने छोटे, कमखोर से भादमी हैं, उन्हें इतना काम नहीं करना चाहिये ।'

उसने मुझसे कहा कि मैं उनको मना करूँ कि वह इतना काम न किया करें । लेकिन वह कहाँ किसी की सुनते । बाद में इस विषय पर जब यह रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो उसने सारे देश को एक प्रशस्त मार्ग दियसाया और धीरे-धीरे सभी प्रदेशों ने उस रिपोर्ट का स्वीकार किया । बाद में जब दाबारा कांग्रेस ने शासन संभासा, तो उसने उसी रिपोर्ट के भाददा पर पूरी तरह से देश में समीवारी का सम्मूसन किया । दिन रात सगन से काम करने की धक्ति और कर्मठता को देखकर मेरे मन में कुछ ऐसे विचार धाया करते थे कि यह ध्यक्ति अपने शरित्र तथा परिश्रम के बस पर ठँबे-से-ठँबे स्थान तक जाने के योग्य है और उसके रास्ते में कोई भीज स्कावट नहीं बास सकती ।

इसाहावाद नगर और जिने के कांघस कर्मियों में धपने परिश्रम और धध्यवसाय के बस पर ही दास्त्री जी ने धपना प्रमुख स्थान बनाया था । इसाहावाद के लिए वे नए थे । क्योंकि उनका जन्म स्थान भुगससराय है । उनकी बास्याबस्या

के कई वर्षों वाराणसी, रामनगर और मिर्जापुर में व्यतीत हुए थे। उन्होंने वाराणसी में राजनीति में प्रवेश किया। प्रथम इलाहाबाद उनके लिए नया था—इस कश्चन में अत्युक्ति नहीं। धार्मिक स्थिति भी ऐसी न थी कि वे उसकी शक्ति का अवलम्ब ग्रहण करते। पर धन और सामाजिक प्रतिष्ठा से भी बड़कर उनके पास एक चीज थी, और वह चीज थी उनकी परिश्रमशीलता—कांग्रेस के उम्मीदों के प्रति उनकी सच्ची मिष्टा। परिश्रम और अध्यवसाय ही उनका साथी था—उनका मार्ग प्रदर्शक था। वे उसी का आचमन पकड़कर कांग्रेस के पथ पर निष्ठा के साथ चलने लगे। थोड़े ही दिनों में छोटों की लो बात ही क्या बड़े-बड़े नेताओं का भी ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ और छोटे-बड़े सबके बीच में धादर से माने जाने लगे।

जिसने शास्त्री जी को एक कांग्रेस कर्मी के रूप में कर्मठता देखी है और देखी है उसकी परिश्रमशीलता, वह यह कहे बिना न रहेगा कि शास्त्री जी बुझसे-पलसे और छोटे कद के अवश्य हैं, पर उनकी हठियों में दधोचि की अस्थियों का तेज है। गर्मी सर्दी, बरसात—चाहे कुछ भी हो शास्त्री जी गाँवों के लिए निकल पड़ते थे। रेल लाँगा इन्का उनको सवारी थी पर चोर देहाती क्षत्रों में वह भी नहीं, नेबल पदम! धूप शीत और वर्षा के अपेड़ों को अपने सीने पर सहते हुए गाँव गाँव के परिभ्रमण किया करते थे। कदाचित् ही इलाहाबाद

जिसे का कोई ऐसा गाँव हो, जहाँ शास्त्री जी न गए हों, और कदाचित् ही ऐसा कोई कस्बा हो, जहाँ शान्धी जी ने भाषण न दिया हो। जिसे के गाँव-गाँव में, कोने-कोने में शास्त्री जी के नाम की गूँज है। प्रातः कास घर से निकलते थे, तो फिर आधी रात के पहले घर नहीं सौटते थे। खाने-पीने की सुधि, और न बाल-बच्चों की चिन्ता। कांग्रेस के कार्यों ने—उसके उसूलों ने जैसे उनके मन को पागल कर दिया हो। उनके मन के उसी पागलपन ने—उनको उसी परिश्रमशीलता में—उन्हें लोकप्रिय बना दिया। इतना लोकप्रिय बना दिया कि वे जिस भी सीमा को साँघकर प्रांत में पहुँचे, और अपनी बिशिष्टताओं से प्रांत की सीमा को साँघकर संपूर्ण देश के नेता के पद पर घासीन हो गए।

वस्तुतः शास्त्री जी की उन्नति ईर्ष्या की वस्तु है—शिक्षा ग्रहण करने की बीज है। आज जो लोग साधनों की विहीनता और अभावों का रोना रोया करते हैं उन्हें शास्त्री जी के जीवन पर दृष्टि डालनी चाहिए। शास्त्री जी भी साधन-विहीन व अभावों से घाबस्त थे। पर वे एक महाबोर को भाँति निरन्तर उन्नति के पथ पर भाग बढ़ते ही गए। और बढ़ते गए परिश्रम के बस पर, अपने अध्यवसाय को शक्ति में। जो लोग परिश्रम और अध्यवसाय का आँखस ग्रहण करते हैं वे इसी प्रकार उन्नति के चिन्तर पर पहुँचकर अपनी भिन्न पंथाका उड़ाते हैं। केवल बाहर ही नहीं, जेसों में भी शास्त्री

जी का जीवन बड़ा ही साधनामय और बड़ा ही परिश्रम-शील होता था। श्री गिरीशानारायण धर्मस्पी जी ने शास्त्री जी के परिश्रम और साधनाशील जेल जीवन का चित्र इस प्रकार खींचा है— शास्त्री जी अपने नित्य कर्म और षोड़श व्यायाम से निबृत्त होकर बराबर अपनी पुस्तकों और लिखने की कापियों में दिन व्यतीत करते थे। फिजूस की गप-राप, लड़ाई-मिड़ाई या 'आ बस मुझे मार' वाली कहावत धरिताप करके धापस वालों और अस बालों से भगाड़ा मोस सेना पसन्द न करते थे। लेकिन साथी यदि किसी प्रश्न पर सबसम्मति से सड़ना निश्चय करते थे, सो सही कदम पर स्वाभिमान की रक्षा के वास्ते एक अनुशासित सेनामी की तरह दृढ़तापूर्वक सधर्य में भी साध रहते थे। वह मित्रभाविता और गंभीर प्रकृति की छाया अपने साथियों पर डालते थे। जमादा सेरबबरबाजी का उनको शौक न था। सदैव मौन रहकर तन्मयतापूर्वक अपना काम करते रहने की उनका धादस थी। जब हम भोग उनसे विशेष आग्रह करते तब वह हम लोगों का बलास लेते थे।'

शासन सूत्र हाथ में धामे पर भी शास्त्री जी में परिवर्तन न हुआ। वे जिस प्रकार पहले धारण को हारण समझते थे वही भाव उनका प्रवेश के मंत्रिकास में था, और वही भाव इस समय भी है जब वे प्रभान मंत्री के पद पर धासीन हैं। उत्तर प्रदेश के पुनिस मंत्री के रूप में शास्त्री जी राठ के दस-भ्यारह बजे तक अपने दफतर में काम किया करते थे। यही

हाल उनका केन्द्र म रेस, वाणिज्य और गृह मंत्री के रूप में भी था। इन पदों पर रहते हुए वे प्रायः ठहके उठ जाया करते थे और फाइलों में तन्मय हो जाते थे। साढ़े दस बजे घर से निकसते थे तो दो बजे लौटते थे, और कुछ खा-पीकर फिर जब आठ बजे तो दस बजे के पहले लौटकर नहीं आते थे। बेंगलूर पर आते ही उन लोगों से मेट-मुलाकात प्रारम्भ कर देते थे जो पचासों की संख्या में होते थे और उनकी प्रतीक्षा में बैठे रहते थे। शास्त्री भी एक-एक व्यक्ति के पास स्वयं जाते थे और वही स्नेह के साथ बातचीत करते थे। किसी से चार मिनट, और किसी से दस मिनट! किसी-किसी से भावदयकतानुसार घाघ-घाघ घंटे का समय भी लग जाता था। यह बातचीत—यह मेट-मुलाकात केवल खड़े-खड़े और टहलते हुए होती थी। कभी-कभी चार-पाँच तक बज जाते थे, पर क्या मजाम कि शास्त्री जी की आकृति पर झुंझलाहट और उकताहट दृष्टिगोचर हो। जब तक वे मवसे मिस नहीं लेते थे, बराबर लॉन में टहलते रहते थे।

रात को बनावित्त ही वे कुछ घंटे आराम से सो पाते रहे हों। प्रमान होते ही फिर वही काय का चक्र प्रारम्भ हो जाता था। परिवार का सुख बच्चों के साथ घामोद-प्रमोद। वे पापद ही बनी शान्ति और निश्चिन्तता के साथ इस अप्रूप आनन्द का रसास्वादन कर पाते रहे हों! उनकी घम-मन्त्री

को तो खाने-खिलाने के उद्देश्य से उनका दर्शन भी हो जाता था पर उनके कुटुम्ब के धन्याय सदस्यों को उनके पास बैठकर बातचीत करने का अवसर बहुत कम मिलता था। जब वेसो तब शास्त्री जी फाइलों में उमके हुए अपने प्राइवेट सेक्रेटारियों से बिरे हुए। घर क सोग हितपी समी शास्त्री जी को समय-समय पर टोकते ही रखते थे कि वे इतना काम न करें, पर शास्त्री जी क्यों मानने सगे? उन्होंने धाराम हराम है के बिस सिद्धान्त को बचपन में ग्रहण किया था बहु उनके धस्तर के कोने-कोने में प्रबिष्ट हो गया था। परिणामत शास्त्री जी का स्वास्थ्य भीतर ही भीतर गिरने सगा। पर फिर भी उन्होंने कभी अपने गिरते हुए स्वास्थ्य की धिकायत किसी से न की।

भीतर ही भीतर शास्त्री जी का स्वास्थ्य गिरता रहा पर फिर भी उनके अध्बबसाम का क्रम न बदसा फिर भी उनकी परिश्रम की साधना बम्ब न हुई। मुझे बहु दिन मसी भाँति याद है जब शास्त्री जी इसाहाबाद में अपने मुट्टी गंज के मकान के कमरे में सोगों से भेंट-मुलाकात कर रहे थे। बाहर सँकड़ों सोग एकत्र थ। उन्हें एक-एक से मिलना था और उसके पश्चात् कार द्वारा मिर्जापुर पहुँचकर एक समारोह में भाग लेना था। स्पष्टत शास्त्री जी की आकृति पर दुर्बसता के चिह्न थे। निवचय ही वे भीतर ही भीतर पीड़ा का अनुभव कर रहे थ पर वे जब तक मूर्च्छित होकर सड़सड़ा नहीं पड़े,

भारतम ह्यम

लोगों को मिलने के लिए बुलाते गए। कदाचित् ही किसी देश का कोई मंत्री जन रुचि और जन हित के लिए इस प्रकार अपने स्वास्थ्य को बाजो मगा सका हो।

सत्यनिष्ठा और ईमानदारी

शास्त्री जी बड़े सत्यनिष्ठ हैं। नेहरू जी के जीवन-दर्शन में सत्य के लिए मिष्ठा भी है पर शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा पर गाँधी जी का प्रभाव है। शास्त्री जी गाँधी जी के समान ही इस सम्बन्ध में बड़े कठोर हैं। उनकी सत्यनिष्ठा और उनकी ईमानदारी के कारण उनके सहस्रों ऐसे मित्र हैं, या उनसे प्रसन्न नहीं रहते। शास्त्री जी ने अपने शासन काम में सदा स्वजनों की, स्वजातीयों की, और समे-सम्बन्धियों की उपेक्षा करके अपने सत्य की रक्षा की है। सैकड़ों ऐसे अवसरों को मैं जानता हूँ जब उन्होंने अपनी बूढ़ माता और पत्नी को भी

सरय के लिए उपेक्षा की है। इतना ही नहीं उन्होंने स्वयं अपनी भी—अपनी कामनाओं की भी उपेक्षा की है। आज सोलह-सत्रह वर्षों तक सरकार में उच्च पदों पर रहते हुए शास्त्री जी के पास अपना कुछ भी नहीं है। न अपना मकान है और न अपनी कोई सम्पत्ति है। मैं शास्त्री जी की पारिवारिक स्थिति से परिचित हूँ। अतः मैं यह कहने का अधिकार भी रखता हूँ कि कदाचित् कांग्रेस के कर्णधारों में शास्त्री जी ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने शासन के क्षेत्र में उच्च और सर्वोत्तम पदों पर रहते हुए भी अपने लिए कुछ नहीं किया। मेरे कानों में उनकी पत्नी के यह शब्द आज भी गूँजते रहते हैं— 'शास्त्री जी, हम लोगों को दुख के नीचे ही टिकायेंगे।' यद्यपि मैं इस देश का दुर्भाग्य ही कहूँगा। इस देश के लिए यह किन्तु दुख और क्लेश की ही बात है कि जो लोग उसकी सेवाग्न में अपना सबस्व होम कर दें, उनके पास उनके बच्चों के रहने के लिए अपना मकान भी न हो। जहाँ तक मुझे मालूम है उसके आधार पर मैं यही कहूँगा, कि इस देश के निवासियों ने कभी उनके साथ न्याय नहीं किया है, जिन्होंने बिना किसी माह के देश के घरों पर अपना सबस्व अर्पित कर दिया। हो सकता है कि लोगों ने उनकी मूर्तियाँ बनाकर अपने कमरों में रखा ही हों, हाँ सकता है कि वे उनकी मूर्तियाँ सब्बाबर आनन्द की महलों में मग्न होते हों और यह भी हो सकता है कि वे उन्हें घुप-धीप दिखाकर उनको श्रापना भी करते हों,

दुइ ईमानदारी । इसी निष्ठा और ईमानदारी ने शास्त्री जी को उन्नति के सिंहर पर पहुँचाया है—समाज में संपूज्य बनाया है । कांग्रेस में, शासन क्षत्र में इसी के बल पर वे अपनी धाक जमा सकें हैं । उनकी सत्यनिष्ठा की—उनकी ईमानदारी की आज लोगों पर इसमी धाक है कि केवल 'शास्त्री जी' कहें ही लोग ईमानदारी का अर्थ लगा लेंगे हैं । किसी भी कमेटी में किसी भी समठन में और किसी भी विभाग में केवल शास्त्री जी का नाम सुन करके ही लोग यह कह उठते हैं कि अवश्य ईमानदारी होगी, अवश्य सच्चाई बरती जायगी । क्योंकि लोगों की यह धारणा है कि शास्त्री जी अब स्वयं अपने लिए भी सत्य का आचल नहीं छोड़ते फिर उनके संबंध में यह सोचना ही अपने साथ विश्वासघात करना है कि वे कभी किसी के साथ पक्षपात करेंगे—निर्णय करते हुए सत्य का धावर न करेंगे ।

और सचमुच शास्त्री जी ने निर्णय में—नियमों के पालन में आज तक कभी किसी का पक्षपात नहीं किया । उन्होंने अपने सगे से सगे सम्बन्धी को भी रुष्ट कर दिया है पर उन्होंने सत्य का पक्ष नहीं छोड़ा है । उन्होंने अपने प्रिय से प्रिय स्वजन की भी चुपचाप पदावनति देख ली है पर उन्होंने ईमानदारी के पक्ष से पृथक् होना पसन्द नहीं किया । कई ऐसे भी अवसर आए हैं, जब उनके अधीनस्थ अधिकारों तक में किसी विशेष व्यक्ति के कार्य के लिए उनसे निषेधन किया है, पर उन्होंने

सत्य के लिए उपेक्षा की है। इतना ही नहीं, उन्होंने स्वयं अपनी भी—अपनी कामनाओं की भी उपेक्षा की है। आज सोमह-सत्रह वर्षों तक सरकार में उच्च पदों पर रहते हुए शास्त्री जी के पास अपना कुछ भी नहीं है। न अपना मकान है और न अपनी कोई सम्पत्ति है। मैं शास्त्री जी की पारिवारिक स्थिति से परिचित हूँ। अतः मैं यह कहने का अधिकार भी रखता हूँ कि कदाचित् कांग्रेस के कार्यकारियों में शास्त्री जी ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने शासन के क्षत्र में उच्च और सर्वोत्तम पदों पर रहते हुए भी अपने लिए कुछ नहीं किया। मेरे काना में उनकी पत्नी के यह शब्द आज भी गूँजते रहते हैं—“शास्त्री जी, हम लोगो को कुछ क मोचे ही टिकायेंगे।” यद्यपि मैं इसे देश का दुर्भाग्य ही कहूँगा। इस देश के लिए यह कितने दुःख और कलक की ही बात है कि जो लोग उसकी सेवागिरि में अपना सबस्व होम कर दें उनके पास उनके वर्णों के रहने के लिए अपना मकान भी न हा। जहाँ तक मुझे भासूम है, उनके आधार पर मैं यही कहूँगा, कि इस देश के निवासियों ने कभी उनके साथ न्याय नहीं किया है जिन्होंने बिना किसी माह के दम के बरणों पर अपना सबस्व अर्पित कर दिया। हो सकता है कि मागा ने उनकी मूर्तियाँ बनाकर अपने कमरों में रख ली हों हो सकता है कि वे उनकी मूर्तियाँ मन्नाकर धान-की सहूरों में मग्न होते हों, और यह भी हो सकता है कि वे उन्हें धूप-दीप बिगाकर उनकी प्रायना भी करते हों

पर उन्होंने कभी इस बात को सोचने और समझने की चिन्ता नहीं की कि उनके बन्धन किस स्थिति में हैं और वे किस प्रकार जीवन यापन कर रहे हैं। इतना ही नहीं उन्होंने इस बात को भी समझने की धातुरता बहुत कम अर्थों में ही प्रकट की है कि उनके सिद्धान्त क्या थे—उनके विचार क्या थे ?

शास्त्री जी की जनसमूह में बड़ी घास्पा है। उन्होंने अपने सासन काल में कभी अपने अधीन अफसरों के कर्मभ्य पामन में बाधा उपस्थित नहीं की। उन्होंने कांग्रेस के सिद्धान्तों और योजनाओं के अनुसार कार्य करने की उन्हें प्रेरणा तो दी, पर प्रशासन के कार्यों में नियमों की पूर्ति में उन्होंने कभी अफसरों को झुकने के लिए बाध्य नहीं किया। उत्तर प्रदेश से लेकर केन्द्र तक वे सदा अफसरों के प्रति विद्वस्त बने रहे। उनकी इस प्रवृत्ति से उनके ही मित्र क्षिप्त हो गए, कितनों ही के मन में उनके प्रति विरक्ति उत्पन्न हो गई और कितनों ही ने उनकी सरसनिष्ठा और ईमानदारी का एक दूसरा पक्ष भी लगाया, पर शास्त्री जी फिर भी अपने पथ से विचलित नहीं हुए। ऐसी बात नहीं कि वे इस बात से परिचित न हों, पर फिर भी वे अपने सत्य का निर्वाह करते जा रहे हैं। कितना अगुआ होता कि अफसर और उनके साथ रहने वाले सरकारी कर्मचारी भी शास्त्री जी के विचारों को समझ सकते और उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण करते। फिर तो आज जो कुछ हो रहा है वह न होता। न तो कांग्रेस बदनाम होती, और न

सरकार के अस्तक पर ही किसी प्रकार का कलक सगता । मैं यह नहीं कहता कि शास्त्री जो के समान ही कांग्रेस के सभी नेता सत्यनिष्ठ हैं पर मैं यह कहूँगा कि आज देश की भाव की पसबार बिन हाथों में है, वे अवश्य सत्य के साथे में डस हुए हैं ।

शास्त्री जो की सत्यनिष्ठा और उनकी ईमानदारी की धमक ! वह ऐसी धमक है जो अग्नि की सपटों में उपाई जाने पर ग्योतित हुई है—निस्सरी है । उनकी वास्मावस्था के वे धभावपूरा दिन । मैं उनकी सचाई और ईमानदारी के लिए उन दिनों को—उन दिनों की घड़ियों को अग्नि की सपटें ही कहूँगा । शास्त्री जो अपने वचपन के दिनों में जिन स्थितियों से सड़ते-झुलते रहे हैं, कोई विरसा ही बालक उनमें अपनी पतता की—अपनी साबुता की रथा कर सकता है । वे जिस साहस के साथ—जिस धैर्य के साथ अग्नि की उम भयानक सपटों में रहकर निखर सके हैं, वह उन्हीं के योग्य है । मैं उन दिनों की भी अग्नि की सपटें ही कहूँगा अब शास्त्री जो अपनी कच्ची गृहस्त्री का प्रयाग में मगवान के भरोसे छोड़कर जेल की यात्रा किया करते थे । परिवार में स्त्री, माता और छोटी बालिका । न अथिक् साधन और न सम्बस । उस स्थिति के अनुमान मात्र से ही हृदय काँप जाता है । पर शास्त्री जो का भी हृदय काँप जाता था, यह नहीं कहा जा सकता । क्योंकि वे अपने परिवार को इसी रूप में छोड़कर धार-धार जेल की यात्रा किया करते थे ।

यहाँ मैं कुछ घटनाओं को उद्घृत करने का शोभ रोक नहीं सकता क्योंकि ये घटनाएँ भी प्राग की उन्हीं सपटों के समान हैं जिनमें शास्त्री जी की सचाई तपाई गई है। प्रकृति की ओर से ज्योतिष की गई है—शास्त्री जी मनी जेस में थे, इसी बीच आपकी पुत्री पुष्पा भस्मस्व हुई और कुछ ही दिन में उसकी हासत चिन्तनीय हो गई। स्वामीय साधियों ने आपसे बाहर आकर उसे देखने के लिए कहा। परोस स्वीकृत हुई—पर शास्त्री जी ने परोस पर आना अपने आत्म-सम्मान के सिलाफ समझा क्योंकि सरकाशीन जिलाधीश ने कहा कि शास्त्री जी यह लिखकर दे दें कि बाहर आन्दोमन के समर्थन में कुछ न करेंगे। शास्त्री जी ने दृढ़तापूर्वक सघर्ष छूटने से इनकार कर दिया। अन्त में जिलाधीश का शास्त्री जी की नैतिक दृढ़ता और स्वाभिमान के सामने झुकना पड़ा। बिना अक्ष पन्द्रह दिन के लिए परोस पर शास्त्री जी छूटे। घर पहुँचे—पर उसी दिन बामिका के प्राण-पञ्जर उड़ गए। शास्त्री जी उसकी अन्तिम क्रिया करके वापस लौटे—पर के अन्दर भी परिवार से मिसले नहीं गए। सामान उठाकर तंगि में बैठ गये—सोगों ने समझया कि अभी तो आपकी परोस बाकी है। शास्त्री जी ने कहा कि जिस कार्य के लिए परोस पर छूटा था वह खतम हो गया है इसलिए अब सिद्धान्तत मुझे जेस जाना ही चाहिए और शास्त्री जी जेस भले गए।

इसी के एक बप बाद की बात है। शास्त्री जी का पुत्र

सत्यनिष्ठा और ईमानदारी

बीमार पड़ा। उसे बड़े जोर का टाइफाइड हो गया। उम्र उसकी यही कोई चार वष की थी। शास्त्री जी एक सप्ताह के परोल पर आये। आने का दिन आया—बच्चे को १०५ डिग्री बुखार था। वह छटपटा रहा था। शास्त्री जी एक घंटे तक उसकी चारपाई के पास सड़े रहे। पिता की धाँसों से प्राँगू बहते रहे, बच्चे का विस्तर भीगता रहा। बुखार बढ़ता जा रहा था डाक्टर चिन्तित मुद्रा में सड़ा था। जिलाधीश का सन्देश आया कि शास्त्री जी मिश्रित वायदा करें कि भ्रष्टाचारियों से कोई सम्पर्क न रखेंगे, तो परोल की अवधि बढ़ाई जा सकती है। बुखार १०५ तक जा चुका था। शास्त्री जी के चेहरे की ओर सब की दृष्टि थी। बच्चे ने शास्त्री जी को कसकर पकड़ लिया— बाबूजी, न जाएँ।”

उस समय शास्त्री जी के मन पर क्या घीत रही थी— इसे किसी पिता का हृदय ही अनुभव कर सकता है। पिता की क्रोधमय भावनाओं पर आन्तिकारी भावार्थ और स्वामिमान ने विजय पाई। शास्त्री जी ने बच्चे को अपने से प्रसन्न किया। प्रशुपूरित धाँसों से सबको नमस्कार किया और कमरे के बाहर निकल आये। यच्चा चीखता रहा— ‘बाबूजी, बाबूजी!’ पर शास्त्री जी ने फिर कर न देखा। और कुछ देर बाद वे बेस की अपनी बैरक में थे। यह है शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा और सिद्धान्तों के प्रति

दुर्द ईमानदारी । इसी निष्ठा और ईमानदारी ने शास्त्री जी को उन्नति के शिखर पर पहुँचाया है—समाज में सपूज्य बनाया है । कांग्रेस में, शासन सत्र में इसी के बल पर ये अपनी धाक जमा सकें हैं । उनकी सत्यनिष्ठा की—उनकी ईमानदारी की भाव लोगों पर इतनी धाक है कि केवल “शास्त्री जी” कहते ही लोग ईमानदारी का अर्थ लगा लेते हैं । किसी भी कमटी में, किसी भी सगठन में और किसी भी विभाग में केवल शास्त्री जी का नाम सुन करके ही लोग यह कह उठते हैं कि अवश्य ईमानदारो होगी अवश्य सच्चाई बरती जायगी । क्योंकि लोगों की यह धारणा है कि शास्त्री जी जब स्वयं अपने लिए भी सत्य का आश्रय नहीं छोड़ते फिर उनके संबन्ध में यह सोचना ही अपने साथ विश्वासघात करना है कि वे कभी किसी के साथ पक्षपात करेंगे—निन्द्य करते हुए सत्य का भावर न करेंगे ।

और सचमुच शास्त्री जी ने निर्णय में—नियमों के पालन में आज तक कभी किसी का पक्षपात नहीं किया । उन्होंने अपने सगे से सगे सम्बन्धी को भी इष्ट कर दिया है पर उन्होंने सत्य का पक्ष नहीं छोड़ा है । उन्होंने अपने प्रिय से प्रिय स्वजन की भी घुपघाप पदावधि देख ली है पर उन्होंने ईमानदारी के पक्ष से पृथक् होना पसन्द नहीं किया । कई ऐसे भी अवसर आए हैं, जब उनके अभीनस्थ अफसरों तक ने किसी विशेष व्यक्ति के काम के लिए उनसे निवेदन किया है, पर उन्होंने

केवल इस लिए उनके निवेदन को स्वीकार करने में अपनी सममतिता प्रमट को कि उस व्यक्ति का उनसे विशेष सम्बन्ध है। अभी गत चुनाव की बात है। इलाहाबाद में कुछ लोगों ने इस बात को लेकर कानाफूसी प्रारंभ की कि शास्त्री जी चौधरी नौनिहाससिंह के चुनाव क्षेत्र में कांग्रेस उम्मीदवार का प्रचार करने के लिए इसलिये नहीं जाते कि चौधरी साहब शास्त्री जी के पनिष्ठ सम्बन्धी हैं। चौधरी नौनिहाससिंह प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के उम्मीदवार थे और शास्त्री जी के पनिष्ठ सम्बन्धी हैं। शास्त्री जी के कानों में अब यह खबर पड़ी, ता वे दूसरे ही दिन चौधरी साहब के चुनाव क्षेत्र में गए, और उन्होंने कई सभाओं में भाषण देकर जनता से अपील की कि वह अपना मत कांग्रेस उम्मीदवार को ही दे। कांग्रेस उम्मीदवार का समर्थन करते हुए शास्त्री जी इस बात को भूल गए कि चौधरी साहब के घर में उनकी पुत्री, सुत्री सुमन, का विवाह हुआ है।

सिद्धान्तों के प्रति ऐसी निष्ठा और दृढ़ता कदाचित् ही और नहीं देखने को मिले। भाव नगर कांग्रेस की वे धड़ियाँ मुझे कभी नहीं भूलतीं। शास्त्री जी एक साधारण सी कूटिया में ठहरे हुए थे। न सिपाही, और न सन्तरी। केवल प्राइवेट सेन्ट्रलरी गर्मा उनके साथ थे। मैं ब्रेषड़क उनके सामने जा पहुँचा। मेरे साथ प्रयाग के दो-तीन और कांग्रेस कार्यकर्ता थे। मैंने शास्त्री जी से निवेदन किया कि वे हम लोगों के लिए 'पास'

का प्रवचन कर लें। शास्त्री जो घोटों में मुस्कराये, और बोले—
 “मह सीजिए रुपए और टिकट खरीद सीजिए।” हृदय पर
 घोट मगी अवश्य पर साथ ही शास्त्री जी के प्रति मन में श्रद्धा
 भी जाय उठी और मन ही मन सोच उठा कि इस छोटे से
 कद के व्यक्ति में सिद्धान्तों के प्रति कसी गहरी निष्ठा और
 कितनी दृढ़ सच्चाई तथा भावना है।

अनुचित बात होगी यदि मैं यहाँ कुछ और ऐसी घटनाओं
 की चर्चा करूँ, जो शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा और उनकी दृढ़
 ईमानदारी के चित्रों को सामने उपस्थित करती हैं। ऐसे
 चित्रों को उपस्थित करती हैं जो उन लोगों के लिए शिक्षा
 प्रद भी हो सकते हैं, जो भाव जाति-पाँति भाई भतीजे, प्राणी
 यता और भापा के अक्ष में फँसकर भारत की उन्नति में बाधक
 सिद्ध होने के साथ ही साथ सरकार की निन्दा के कारण घन
 रहे हैं।

यह उन दिनों की बात है, जब शास्त्री जी उत्तर प्रदेश में
 पुस्तक मंत्री थे। एक दिन शास्त्री जी ने मौसी के सड़के को,
 जो कानपुर में रहते थे, एक प्रतिभोगी परीक्षा में सम्मिलित
 होने के लिए सख्तमऊ जाने की आवश्यकता पड़ी। वह जब
 कानपुर स्टेशन के टिकट घर पर पहुँचे तो गाड़ी छोटी से
 चुकी थी। परिणामतः वह टिकट खरीद न सके और प्लेटफार्म
 की ओर दौड़े। इसी समय किसी अपरिचित व्यक्ति ने उनसे
 कहा कि उसके पास सख्तमऊ का टिकट है। यदि वे चाहें तो

ले सकते हैं। उसने अपनी बात समाप्त करने के साथ ही टिकट उनकी ओर बढ़ा दिया। उन्होंने भट से उसे पैसे दिए, और टिकट जेब में डालकर प्लेटफार्म की ओर भाग लड़े हुए। किसी प्रकार उन्होंने गाड़ी पकड़ी। किन्तु सख्तनऊ स्टेशन पर जब वे उतरे और उन्होंने फाटक पर टिकट दिया तो फाटक पर स्थित कर्मचारी द्वारा रोक लिए गए। उसने कहा कि यह टिकट मात्र का नहीं बीते हुए दिन का है। इसलिए घबरा है। उन्होंने कर्मचारी से विनय प्रार्थना करती प्रारम्भ की कि यह उन्हें जाने दो क्योंकि उन्हें परीक्षा में बैठना है। पर वह टस से मस न हुआ। जब उन्होंने इस प्रकार काम बनता हुआ न देखा, तो दासत्री जी का नाम लिया। उन्हें अपना घनिष्ठ सम्बन्धी बताकर कर्मचारी से सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्टा की। फिर भी कर्मचारी को विद्वाम न हुआ। उसने दासत्री जी की कोठी पर टेलीफोन किया। सयोगल दासत्री जी उस समय कोठी में नहीं थे। दासत्री जी की धर्मपत्नी ने टेलीफोन पर उक्त कर्मचारी के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा— 'हाँ, यह सच है कि वे हमारे रिश्तेदार हैं।' किन्तु जब उमने उनसे यह पूछा कि उनके साथ क्या किया जाय, सब उन्होंने उत्तर में कहा कि यह तो दासत्री जी ही बता सकते हैं।

और उधर दासत्री जी अपने दफ्तर में काय में व्यस्त। घरवासों को भी पता नहीं कि वे कहाँ गए हैं। वे बेचारे

उपगत कर्मचारी के नियमन में शास्त्री जी क वर पहुँचने की प्रतीक्षा करने लगे। टेलीफोन पर टेलीफोन ! शास्त्रिर बाहू बजे कराब शास्त्री जी टेलीफोन पर मिले। उन्होंने सारी घटना सुनी। मद्यपि उन्हें बृद्ध विश्वास था कि उनका रिश्तेदार जो कुछ कह रहा है सच है फिर भी उन्होंने जरा भी संकोष न किया। उन्होंने उस कर्मचारी को उत्तर देते हुए कहा कि ऐसे मामलों में दूसरों के साथ जो व्यवहार किया जाता है वही उनके साथ भी होना चाहिए।

पर एक पुमिस सर्वोच्च अधिकारी ने जो कदाचित् धारा साहब है, पूरी घटना सुनने के पश्चात् उन्हें मुक्त कर दिया। वे भाब तक यह नहीं भूस सके हैं कि केवल शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा के कारण वे उस दिन परीक्षा में सम्मिलित नहीं हो सके। सुनते हैं वे भाब तक शास्त्री जी की कोठी पर कभी नहीं ग्राये। पर यदि वे शास्त्री जी की कर्तव्य-गुरुता पर विचार करते होंगे तो मेरा बृद्ध विश्वास है कि उनके मन में इतत बात के लिए सब ही पैदा होता होगा कि वे एक ऐसे व्यक्ति के निकटवर्ती हैं, जो जाति-पाति और स्वजन-सम्बन्धियों के घरे से ऊपर है—मनुष्य ऊपर है।

यह एक दूसरी घटना, शास्त्री जी की सहन भीमती सुन्दरी देवी एम० एम० ए० ने मुझे सुनाई थी जो उनकी व्याप भीषी है। इस घटना का उल्लेख भी मैं यहाँ इसी उद्देश्य से कर रहा हूँ कि इससे शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा पर प्रकाश पड़ता है—

श्रीमती सुन्दरीदेवी का एक ही सड़का है। उनका नाम है श्री सरकाररण। उन्हें लोग श्री जी कहते हैं। वे घाजकस मुंजर में जिसाधीश के पद पर नियुक्त हैं। कई वय पहले की बात है, 'श्री' जी आई० ए० एस० की परीक्षा में सम्मिलित हुए थे और उत्तीर्ण हुए। साक्षात्कार में भी उनका चयन हो चुका था। पर उस वर्ष जो सूची तयार की गई थी, उसमें उनका नाम कुछ लोगो से पीछे माना था। संयोगत उस वय कुछ थोड़े से ही स्थान रिक्त थे। यद्यपि 'श्री' जी के लिए यह निश्चित था कि वे अपनी योग्यता से ही नियुक्त हो जायेंगे। पर इसमें कुछ देर की संभावना थी। अतः श्रीमती सुन्दरीदेवी ने दिस्ती पहुँचकर घास्त्री जी से कहा कि वे कुछ ऐसी बेप्टा करे, जिससे 'श्री' जी की नियुक्ति पासू वय में हो हो जाए। घास्त्री जी उस समय सुनकर मौन हो गये। बाद में घास्त्री जी ने स्पष्टतः उनसे कहा कि सरकार को यदि अधिक अधिकारियों की आवश्यकता होगी तो उनकी नियुक्ति स्वतः हो हो जायेगी। मैं कुछ भी कर सकने में असमर्थ हूँ।

वे इस बात को लेकर कुछ अप्रसन्न भी हुईं, किन्तु घास्त्री जी ने उनके लिए भी अपने सिद्धान्त का परिष्कार नहीं किया। घास्त्री जी की सत्यानिष्ठा और उनकी ईमानदारी ने संघर्षित इसी प्रकार की और कई घटनाएँ हैं, जो उनके मित्रों में कही जाती हैं। घास्त्री जी ने अपने घनिष्ठ से घनिष्ठ मित्र को अप्रसन्न होते हुए देखा मिया है पर उन्होंने कभी -

उक्त कर्मचारी के नियंत्रण में शास्त्री जी के घर पहुँचने की प्रतीक्षा करने लग। टेलीफोन पर टेलीफोन ! आखिर थारू बजे कराय शास्त्री जी टेलीफोन पर मिल। उन्होंने सारी घटना सुनी। यद्यपि उन्हें बड़ा विश्वास था कि उनका रिश्तेदार जो कुछ कह रहा है, सच है फिर भी उन्होंने धरा भी संकोच न किया। उन्होंने उस कर्मचारी को उत्तर देते हुए कहा कि ऐसे मामलों में दूसरों के साथ जो व्यवहार किया जाता है वही उनके साथ भी होना चाहिए।

पर एक पुलिस सर्वोच्च अधिकारी ने जो कठोरता प्रकट साहब है पूरी घटना सुनने के पश्चात् उन्हें मुक्त कर दिया। वे धात्र तक यह नहीं भूल सके हैं कि कबल शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा के कारण वे उस दिन परीक्षा में सम्मिलित नहीं हो सके। सुनते हैं, वे धात्र तक शास्त्री जी की कोठी पर कभी नहीं धाये। पर यदि वे शास्त्री जी की कर्तव्य-गुस्ता पर विचार करते होंगे, तो मेरा बड़ा विश्वास है कि उनके मन में इस बात के लिए गव ही पदा होता होगा कि वे एक ऐसे व्यक्ति के निकटवर्ती हैं जो जाति-पाति और स्वजन-सम्बन्धियों के धरे से ऊपर है—बहुत ऊपर है।

यह एक दूसरी घटना शास्त्री जी की बहम भीमती सुन्दरी देवी एम० एस० ए० ने मुझे सुनाई थी, जो उनकी धाप वीती है। इस घटना का उल्लेख भी मैं यहाँ इसी उद्देश्य से कर रहा हूँ कि इससे शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा पर प्रकाश पड़ता है—

श्रीमती सुन्दरीदेवी का एक ही लड़का है। उनका नाम है श्री अक्षयधरम। उन्हें भोग 'श्री जी कहते हैं। वे आजकल मुमर मे जिमासीम के पद पर नियुक्त हैं। कई वष पहले की बात है 'श्री' जी आई० ए० एस० की परीक्षा में सम्मिलित हुए थे और उत्तीर्ण हुए। साक्षात्कार में भी उनका भयम हो चुका था। पर उस वष जो सूची तैयार की गई थी, उसमें उनका नाम कुछ लोगों से पीछे आना था। मयोगस उस वष कुछ बोरे से ही स्थान रिक्त थे। यद्यपि श्री' जी के लिए यह निश्चित था कि वे अपनी योग्यता से ही नियुक्त हो जायेंगे। पर इसमें कुछ देर की संभावना थी। अतः श्रीमती सुन्दरीदेवी न दिल्सी पहुँचकर शास्त्री जी से कहा कि वे कुछ ऐसी पेट्टा करें जिससे श्री' जी को नियुक्ति पालू वष में ही हो जाए। शास्त्री जी उस समय सुनकर मौन हो गये। बाद में शास्त्री जी ने स्पष्टतः उनसे कहा कि सरकार को यदि अधिक अधिकारियों की आवश्यकता होगी तो उनकी नियुक्ति स्वतः ही हो जायेगा। मैं कुछ भी कर सकने में असमर्थ हूँ।

वे इस बात को लेकर कुछ अप्रसन्न भी हुईं किन्तु शास्त्री जी ने उनके लिए भी अपने सिद्धान्त का परित्याग नहीं किया। शास्त्री जी की सत्यनिष्ठा और उनकी ईमानदारी से संबंधित इसी प्रकार की और कई घटनाएँ हैं, जो उनके मित्रों में फहो जाती हैं। शास्त्री जी ने अपने घनिष्ठ से घनिष्ठ मित्र को अप्रमत्त होते हुए देखा मिया है, पर उन्होंने कभी किसी के लिए

भी सत्य का परित्याग नहीं किया। सत्य पालन की यह शिक्षा उन्हें राष्ट्रपिता गांधी के चरित्र से प्राप्त हुई है—यदि यह कहा जाए तो अस्युक्ति की बात न होगी। आज भी जब उनकी बहिन शोमती सुन्दरीदेवी इस घटना की चर्चा करती हैं तो स्पष्टतः उनकी भावुकता पर इस बात के लिए गर्व झलक पड़ता है कि वे ऐसे माई की बहिन हैं जो अपनों की उन्नति के लिए सियास्तो का अपहरण नहीं करता।

देश भक्ति

नेहरू जी के जीवन-दर्शन की विशिष्टता—उन्नत राष्ट्रीय दृष्टिकोण वाम्नी जी में भी है। वाम्नी जी का जीवन उन्नत राष्ट्रियता के ही सन्धि में उसा हुआ है। वे गरीब से कायस्थ हैं पर उनमें सभी वर्गों को विनोयताएँ मिलती हैं। उनके मन और हृदय के निर्माण में सभी वर्गों की विशिष्टताओं के तत्वों का योग है। परिणामस्वरूप उनकी सबसे घासक्ति है, और किसी में नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, बहय और वृद्ध—घारों बर्षों के साग उनके पविष्ठ मित्रा में हैं हिन्दू धर्म के धर्म में उन्होंने जग्य ग्रहण किया है पर उनकी सभी धर्मों में आस्था

है। वे धर्म की दृष्टि से किसी व्यक्ति का मूल्य नहीं धाँकते, वरन् धाँकते हैं उसकी मानवता की दृष्टि से। चाहे किसी भी धर्म को मानने वाला व्यक्ति हो पर यदि वह धर्मशास्त्रज्ञ है, योग्य है, धीर सदाचारी है तो वं उसका सम्मान करते हैं—उसे बढ़ावा देते हैं। उन्होंने अपने धर्म तक के जीवन कास में कभी किसी व्यक्ति को इस कारण धावर नहीं दिया कि वह हिन्दू धर्मानुयायी है। यही कारण है कि अल्पसंख्यक वर्ग के लोग उन पर अधिक आस्था रखते हैं। मैं उस दिन को नहीं भूल सकता जब शास्त्री जी का नेता के रूप में खयन हुआ था। उनके बसने पर उन्हें बधाइयाँ देने वालों की भीड़ एकत्र थी। इनमें एक बूढ़े मियाँ जी भी थे, जो पर्वों की पोटली में मासा और पुष्प लिए हुए थे। शास्त्री जी के आगे पर वं उनके पास जा पहुँचे और उनके गले में मासा बाँधते हुए बोले— 'बूढ़ा का धुक है जो आपका नेता के रूप में चुनाव हुआ। अपनी यात पूरी करते हुए उनकी धाँस छसछसा धाई थी।

बूढ़े मियाँ जी की धाँसों से वे धाँसू। वे धाँसू नहीं अल्पसंख्यकों की आस्था और प्रेम की बूँदें थीं। हो सकता है कुछ लोगों को यह प्रिय न हो, पर जो लोग उन्नत राष्ट्रीयता में विश्वास करते हैं जो लोग धर्म और जाति की सीमा से दूर मानवता के आगत में खेसना पसन्द करते हैं वे शास्त्री जी के इन विचारों का धावर ही फरेंगे कि राष्ट्रीयता के क्षेत्र में न कोई हिन्दू है और न कोई मुसलमान। न कोई सिक्ख है

घोर न ईसाई । सभी केवल भारतीय हैं—केवल भारतीय । श्री मेहन्त जी ने भारत की राष्ट्रीयता का चित्र इन्हीं विचारों के आधार पर निर्मित किया है । शास्त्री जी भी इन्हीं विचारों के दृढ़ पोषक हैं । केवल दृढ़ पोषक ही नहीं हैं, उन्होंने इन विचारों के साथे में अपने जीवन को ढाला है । वे राजनीति के पथ पर अपना एक-एक पग इन्हीं विचारों के आधार मान कर उठाते हैं । वे घर के भीतर और बाहर—एकसमान धारण करते हैं । जिस प्रकार राजनीति के पथ पर उनकी सब धर्मों में समदर्शिता दिखाई पड़ती है, वही नाम उनका घर के भीतर भी रहता है । उनके घर में प्रतिदिन पूजा-पाठ और कीर्तन चलता ही रहता है । पर मैंने कभी उन्हें कुछ देर तक बैठकर कीर्तन सुनने हुए नहीं देखा । प्रायः किए जाने पर वे केवल मुस्तुरा दिया करते हैं, और केवल एक ही बात में प्रायःहर्तार्थों का मूल बन्द कर देते हैं—“भाप लोग बड़ पुण्यात्मा हैं मेरे ऐसे भाग्य कहाँ ?”

पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि शास्त्री जी की पूजा-पाठ और कीर्तन से विरक्ति है । इसका तात्पर्य केवल यह है कि शास्त्री जी सभी धर्मों के इतरों में, केवल इन्हीं कर्तव्यों को ईदते हैं जो मनुष्यों के पारम्परिक पापबन्ध का प्रमाण पारती हैं । मेरी समझ में शास्त्री जी की ये पद्धतियाँ हैं मय । मैं कह नहीं सकता कि शास्त्री जी की कम की प्रेरणा वहाँ से मिलती । यदि मैं यह कहूँ कि उन्हें कम की प्रेरणा मीला से किसी हागी,

तो घ्राह्य नहीं किया जाता चाहिए। क्योंकि वास्त्यावस्था से ही शास्त्री जी के घर में गीता का पाठ होता है। उनकी माता जी, जिनकी अवस्था इस समय लगभग अस्ती वर्ष की होगी, अपनी इकतीस-बाईस वर्ष की अवस्था से ही गीता में अनन्य आस्था रखती बसी आ रही है। पंडित निष्कामेश्वर मिश्र डा० भगवानदास स्वर्गीय आषाम नर-द्रदेव और डा० सम्पूर्णानन्द आदि मनोपी भी जिनके सम्पर्क में रहकर शास्त्री जी ने ज्ञानाजन किया है घ्राह्यता के क्षेत्र में 'कर्म' के ही उपासक थे और हैं। अतः शास्त्री जी भी कर्म का ही प्रमुखता देते हैं। वे भीतर और बाहर—सम ओर से केवल 'कर्म' के ही उपासक हैं। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई—य सब में कम की ही खोज करते हैं। जा कमबान् है वह चाहे कोई हो उनका प्रिय है। बावजूद में भी वे प्रायः 'काम' की बात का ही महत्व देते हैं। उनसे जब कोई व्यक्त की बात-बात करने लगता है तो वे भट्ट यह कहकर उसका मुँह बंद कर दिया करते हैं कि 'केवल काम का बात कीजिए।'

शास्त्री जी की राष्ट्रीयता पर गांधी जी की निमग्नता की छाप है। राष्ट्रीय बंधियों को संजोने में शास्त्री जी भी गांधी जी के समान ही अपने कितने ही हितैषियों मित्रवर्तियों और मित्रों को घ्राह्य करके हुए नहीं हिषकते। पुसिस मन्त्री के रूप में उनके सामने कितनी ही बार ऐसी समस्याएँ आईं, जिन्हें हिन्दू-मुसलिम समस्या के नाम से अभिहित करना अनु-

बेग भक्ति

चित्त न होगा। पर शास्त्री जी ने उन सपूर्ण समस्याओं के हल और निपटारे में सदा अपनी निभीकता का ही परिचय दिया। उन्होंने अपने परिचितों मित्रों और स्नेहियों से पृथक होकर अपना निर्णय दिया। यद्यपि उनके निष्पत्ति से कुछ लोगों ने उन पर मुसलिमपरस्ती का इल्जाम लगाया, और अपने स्वाध्याय-माधन के लिए जनता में प्रचार भी किया पर फिर भी शास्त्री जी ने कभी इस बात की चिन्ता नहीं की। वे बड़ी निभीकता के साथ आज भी उन्हीं से मिलते-जुलते निष्पत्तियों की पुनरावृत्ति करते जा रहे हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि उपरत राष्ट्राय दृष्टिकोण के कारण जब भी नेहरू जी को बदनाम किया जा सकता है और जब गांधी जी ऐसे महामानव को गोलियों का पिन्कार बनाया जा सकता है तब उन पर भी छींटाकशी की जाए तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

केवल जाति-भक्ति और धर्म के ही क्षेत्र में नहीं भाषा और प्रांतीयता के क्षेत्र में भी शास्त्री जी का दृष्टिकोण बड़ा ही ऊँचा और दमापनीय है। शास्त्री जी उस प्रयाग और वाराणसी के निवासी हैं, जिस लोग हिन्दी और संस्कृत का गढ़ मानते हैं। शास्त्री जी ने स्वयं हिन्दी और संस्कृत का विशेष रूप से अध्ययन किया है। हिन्दी के प्रबल समर्थक राजपि पुरुषोत्तमदास टण्डन के साथ वे अपने जीवन के कई वर्ष व्यतीत कर चुके हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन से भी बराबर उनका सम्बन्ध रहा है। पर फिर भी उन्होंने हिन्दी के

सबसे कम से कम ऐसा कोई कदम नहीं उठाया, जिससे अहिन्दी भाषा-भाषियों के मन में उनके प्रति सन्देह जागृत हो, और उन्हें यह कहने का अवसर मिले कि शास्त्री जी पक्षपात कर रहे हैं। हिन्दी शास्त्री जी की अपनी भाषा है और अब तो यह सबकी भाषा है, पर राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से वे हिन्दी की उन्नति सबको साथ में ही लेकर करने के पक्ष में हैं। वे किसी भी अवसर पर किसी भी समारोह में ऐसा कोई कृत्य नहीं करते जिससे भाषा के संबंध में उनकी अपनी हठधर्मी प्रकृति प्रकट हो। कदाचित् यही वह कारण था कि शास्त्री जी ने प्रधान मंत्री पद की घोषणा की पूर्ति भेजनी में की। हिन्दी के कई अधिकांशों में इस बात का लेकर शास्त्री जी की आलोचना की गई थी पर इसके साथ ही साथ अहिन्दी भाषा भाषियों और राष्ट्रवादियों की ओर से उन्हें साधुवाद भी मिला था। पर शास्त्री जी को न तो आलोचनाओं ने भयभीत किया और न साधुवाद के शब्दों ने गुमराह किया। वे आज भी हिन्दी की सर्वतोमुखी उन्नति चाहते हैं, पर उसके लिए वे राष्ट्रीयता की उस सच्ची को कदापि भग्न न होने देंगे जो और साधनाओं और तपश्चर्याओं के पश्चात् निर्मित की गई है।

शास्त्री जी उत्तर प्रदेश के निवासी हैं ! पर कदाचित् यही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके निकटवर्तियों में—कमचारियों में—उत्तर प्रदेश के निवासियों का अनुपात बहुत ही स्वल्प है। वास्तव में बात यह है कि शास्त्री जी जब जिस विभाग में

रहे हैं उन्होंने प्रांतीयता के क्षेत्र से ऊपर उठकर काम किया है। कमचारियों और घफ्तारों की नियुक्ति और पसन्द में उन्होंने सदा योग्यता और कायकामता को ही सर्वोपरि माना है। रेल मंत्री से लेकर प्रधान मंत्री के पद तक यदि उनके निकटवर्ती और प्रधान कमचारियों पर दृष्टि डाली जाए, तो शास्त्री जी प्रांतीयता के इस महा रोग से मुक्त दिखाई देंगे। यद्यपि इस रोग-मुक्ति ने शास्त्री जी को उत्तर प्रदेश की राजनीति में पीछे खिसकने के लिए बाध्य किया है, पर शास्त्री जी राजनीतिक पदों और अधिकारों से राष्ट्र को अधिक महत्त्व देते हैं। वे राष्ट्र की वैदिका पर अपनी बलि चढ़ा सकते हैं पर अपने स्वार्थों के लिए राष्ट्रीयता की बलि उन्हें पसन्द नहीं—स्वीकार नहीं।

शास्त्री जी ने अपने बिचारों के द्वारा अपने उन्नत राष्ट्रीय दृष्टिकोण का चित्र भी उपस्थित किया है। निम्नांकित पंक्तियों में उन्होंने राष्ट्रीयता, साम्प्रदायिकता, प्रांतीयता और भाषा का जो चित्र खींचा है वह उन्हीं के योग्य है—
'हमें अपनी राष्ट्रीयता की जड़ों को और अधिक मजबूत करना है। हमारी राष्ट्रीय भावना की एक कमजोरी का नाम घपड़ों ने रखाया। भारत के एक बम को उन्होंने फुसताया। कांग्रेस ने कभी भी वा राष्ट्र के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया फिर भी हम परिस्थितियों से मजबूर थे। और कुछ लोगों ने एक असंग राष्ट्र पाकिस्तान की माँग की।

पाकिस्तान ने अपने को एक इस्लामी राष्ट्र घोषित किया, पर हम अब भी एक राष्ट्र सिद्धान्त को ही मानते हैं क्योंकि इसी में मानव-समाज का कल्याण है।

पाकिस्तान के प्रति हमारी कोई वैमनस्यपूर्ण भावना नहीं है। पाकिस्तान ने अपने को इस्लामी राष्ट्र घोषित करके वहाँ के अल्पसंख्यकों को गूब सताया फिर भी हमने अपना संमम नहीं छोड़ा। उधर पाकिस्तान से अल्पसंख्यकों को जबदस्ती बाहर निकाला जा रहा था, उधर हम भारत में मुस्लिम अल्पसंख्यकों की पूर्ण रक्षा कर रहे थे। यह है भारत की परम्परागत उदारभावना।

पाकिस्तान में हिन्दुओं को बर्बाद किया गया। भारत में फिलहाल तो साम्प्रदायिकता नहीं है। पर क्या वह पूणत समाप्त हो चुकी है या नहीं यह भावना तब तक समाप्त नहीं होगी जब तक हम इस प्रवृत्ति को रचनात्मक कार्यों में नहीं लगा पाते।

धर्म का प्रभाव कभी-कभी बड़ा विचित्र होते हैं। धर्म भी बहुत से भाग यह कहते पाये जाते हैं कि हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख अलग समुदाय हैं। यह स्वीकार करना पड़गा कि हमारे समाज में अनेक बुटियाँ हैं और उनका कारण धर्म का भावना है। एक ही धर्म में रहने वाले हिन्दू, मुसलमान और ईसाई भाषण में मिसते-जुसते हैं, उनके परस्पर सम्बन्ध भी हैं पर उनके जीवन का ढंग परस्पर भिन्न है। अब जब

तक यह मित्रता बनी रहूगी तब तक हमारी राष्ट्रीयता अक्षुण्ण रहेगी।

‘ साम्प्रदायिकता के रोग का निदान करने के लिए हमें पुराने इतिहास को दृष्टिगत करना होगा। यदि हम उसको ध्यान में रखकर आग प्रयत्न करेंगे, तो सम्भवतः हम यह गसती नहीं करेंगे जो पहले हो चुकी है। मित्रता का प्रदान तथा शुद्ध राष्ट्रीय भावना—दोनों पृथक् हैं। राष्ट्रीयता का अर्थ है देश के प्रति लगाव और निष्ठा। व्यक्तिगत धार्मिक तथा साम्प्रदायिक दायरे से बाहर निकलकर अपने अतीत, वर्तमान तथा भविष्य के प्रति एक स्वाभिमान की भावना ही राष्ट्रीयता है। इसके लिए साधारण इन्फेन्सिबल प्रयत्नों या दबाव से हम दिनार्म कीर्ति प्राप्त न हागा। हम राग का निदान तो सपकर तथा धय के साथ करना होगा।

‘ किमी राष्ट्रीयता की आवश्यक घट्टें ये हैं—एक भौगोलिक पत प्रदेश, एक सम्मिलित इतिहास, सम्मिलित सामाजिक प्रथाएँ एवं जीवन यापन का ढग और एक सम्मिलित भाषा। ये सभी घट्टें भारत में मौजूद हैं। इन सभी घट्टों का एक मयप्र रूप हा संस्कृति कहा जा सकता है। और जब तक यह संस्कृति सुरक्षित रहनी है तब तक जनता को मूम एकता अर्थात् मय नहीं हो सकती।

हमारी संस्कृति भारत के विचारा उमकी भावनाआ तथा उमका मभेउन आकांक्षाओं की प्रतीक है।

पाकिस्तान में अपने को एक इस्लामी राष्ट्र घोषित किया, पर हय अब भी एक राष्ट्र सिद्धान्त को ही मानते हैं क्योंकि इमी में मानव-समाज का कल्याण है।

‘पाकिस्तान के प्रति हमारी कोई वमनस्यपूर्ण भावना नहीं है। पाकिस्तान में अपने का इस्लामी राष्ट्र घोषित करके वहाँ के अल्पसंख्यकों को खूब सताया, फिर भी हमने अपना संयम नहीं छोड़ा। उधर पाकिस्तान से अल्पसंख्यकों को जबरदस्ती बाहर निकाला जा रहा था उधर हम भारत में मुस्लिम अल्पसंख्यकों की पूर्ण रक्षा कर रहे थे। यह है भारत की परम्परागत उदारभावना।

पाकिस्तान में हिन्दुओं को दवा लिया गया। भारत में फिज्जहाल तो साम्प्रदायिकता नहीं है। पर क्या वह पूणत समाप्त हो चुकी है या नहीं, यह भावना तब तक समाप्त नहीं होगी जब तक हम इस प्रवृत्ति को रणमात्मक कार्यों में नहीं लगा पाते।

‘धर्म के प्रभाव कभी-कभी बड़ विधित्र होते हैं। अभी भी बहुत से लोग यह कहते पाये जाते हैं कि हिन्दू मुसलमान धीरे सिक्ल्य असंग समुदाय है। यह स्वीकार करना पड़गा कि हमारे समाज में अनेक त्रुटियाँ हैं धीरे उनका कारण धर्म की भावना है। एक ही यत्नी में रहने वाले हिन्दू मुसलमान धीरे ईसाई आपस में मिसते-जुमते हैं उनके परस्पर सम्बन्ध भी हैं, पर उनके जीवन का दय परस्पर भिन्न है। अत अब

‘संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति के प्रसार का माध्यम, ज्ञान का कोष तथा भारत की जन भाषा रही है। संस्कृत का ह्रास हान से राष्ट्रीयता का एक दक्षिणायनी माध्यम नष्ट हो गया। अंग्रेजी भाषा ने हमें पुनः सांस्कृतिक एकता व राष्ट्रीयता का बोध कराया पर साथ ही उसमें समाज को बासक और दासित तथा अवेजीदा और शर अवेजीदा—दो भागों में बाँट दिया। पर जब हमारा स्वयं वगहीन समाज समाप्त है तो हम इस भेद भाव को कैसे रहने दे सकते हैं? लोकतंत्र में ऐसी कोई भी वस्तु जीवित नहीं रह सकती जो जन-जन की घपती न हो।’

बौद्धिक कुशलता

शास्त्री जी में अपूर्व बुद्धि की गत है। वे किसी बिगड़ती हुई चीज को बचाना और किसी जटिल समस्या को सुलझाना बूझ जाते हैं। वे विवादों के घबकार में भी सत्य का तूँड लेते हैं—निदान की चाह लगा लेते हैं। कांग्रेस के क्षय में बिगड़ती हुई समस्याओं को सुलझाने के लिए वे अधिक प्रसिद्ध हैं। जब भी किसी प्रान्त में कोई विग्रह खड़ा हुआ है—किसी बात को लेकर झगड़ा उत्पन्न हुआ है, या गन्दे शास्त्री जी का धागे खड़ा किया है। तो क्या नेहरूजी ने ईश्वर की गीत नहीं पा ? उनमें दूरदर्शिता का घमास का

नेहरू जी में अपार बुद्धि-कौशल था और अपार दूरदर्शिता भी, पर नेहरू जी विवादग्रस्त मामलों में प्रायः शास्त्री जी को ही भाग दिया करते थे। शास्त्री जी की मूकता उनके धर्म और उनकी विचारशीलता का उन्हें बुरा मरोसा था। वे कई अवसरों पर उनके इन गुणों को अपनी बसोटी पर कस चुके थे, और उन्हें 'लरा' वा चुके थे। शास्त्री जी ने यह बात मुख्य रूप से है कि विवादग्रस्त स्थलों पर बिप की बड़वी घूँटें भी पीकर उन्हें पचा जाते हैं।

सन् १९३१ के चुनाव के दिन। कांग्रेस के भीतर चुनाव को लेकर एक महान् सचर्चा-सा उठ खड़ा हुआ था। कुछ-एक प्रांत में नहीं बल्कि प्रायः सभी प्रांतों में चुनाव के प्रश्न को लेकर एक अजीब विलडावाद-सा पैदा हो उठा था। बड़-बड़ नेता तो टिकट के उम्मीदवार थे ही छोटे-छोटे कार्यकर्ताओं के मुँह में भी पानी भर गया था। कितने ही बाहर के लोग भी थे, जो कांग्रेस के टिकट के लिए एड़ी चोटी का पसीना एक कर रहे थे। एक-एक स्थान के लिए दस-दस उम्मीदवार। जिसे वेसो वही धर्मिँ तरेर रहा था। श्री नेहरू के सामने एक महान् भँवर-बास-सा उत्पन्न हो गया कि वे किस प्रकार लोगों की अनिलापायों की तरंगों को एकता के सुवृद्ध कूलों में बाँध सकें। वे कांग्रेस के भीतर एक ऐसे महान् व्यक्तित्व की लाज करने लगे जो अपनी व्यवहार से, अपनी बुद्धि की कुशलता से सबको सन्तुष्ट कर सके।

भास्त्रि उनकी दृष्टि शास्त्री जी पर पड़ी। उन्होंने शास्त्री जी के कर्षों पर इसका मार छोड़ दिया। शास्त्री जी ने उनकी भाज्ञानुसार ही शासन के कार्यों से पृथक् होकर निर्वाचन के दायित्व को अपने ऊपर लिया। और फिर जिस कौशल के साथ उन्होंने अपने दायित्व का निर्वाह किया उसकी समर्थकों ने ही नहीं, विरोधियों ने भी मूरि मूरि प्रशंसा की। इसी प्रकार दूसरे और तीसरे चुनाव में भी शास्त्री जी ने अपने बुद्धि-बौगम से कांग्रेस-संगठन की सड़ी को, पारस्परिक विरोधों से कमबोर होने से बचाया ही नहीं, उसे सुदृढ़ भी बनाया।

असम में भाषा-विवाद के वे दिन ! ऐसा लगता था कि असम में भाषा विवाद को लेकर एक भयानक विस्फोट होगा और उससे भारत की राष्ट्रीयता की घरती हिंस उठेगी। नेहरू जी को फिर शास्त्री जी की याद आई और उन्होंने उन्हें असम भेजा। शास्त्री जी ने असम आकर दोनों पक्षों की बातें सुनने और सतुलित निर्णय देने में जिस धय और कौशल को उपलब्ध किया था, उसकी सभी समाचार-पत्रों और नेताओं ने मूरि मूरि प्रशंसा की थी। वह शास्त्री जी की ही अपूर्व बुद्धि और बुद्धि का बौगम था कि असम की भाषा समस्या में अशरर्य कारण नहीं किया, और उसके मस्तक पर जो कमक लगने जा रहा था, वह लगने से बच गया। आज असम और बंगाल के बड़े-बड़े नेता तक शास्त्री जी के इस उपकार को मानते हैं और उनके बुद्धि चातुर्य की सराहना करने के

गाय ही साथ उनके प्रति कृतज्ञता भी प्रगट करते हैं ।

वे दिन भी नहीं मूसते गय नेपाल और भारत क पार स्परिक सम्बन्ध दिगढ़ने सगे थे । कारण भाहे जो भी रहा हो, पर ऐसा प्रतीत होने लगा था कि भारत और नेपाल क बीच एक गहरी काई पैदा हो जायगी । ऐसी छाई, जो दोनों देशों की उन्नति और प्रगति के लिए विघातक सिद्ध होगी । थी नहूँ फिर इस समस्या को लेकर चिन्तित हुए और उन्होंने फिर शास्त्री जी को इस कार्य के लिए घाने किया । शास्त्री जी ने नेपाल की सद्भावना यात्रा की । शास्त्री जी ने नेपाल के उच्च अधिकारियों से बातें की और उन कारणों को जानने की चेष्टा की, जो भारत और नेपाल की पारस्परिक मित्रता में अवरोध पैदा कर रहे थे । शास्त्री जी ने उन कारणों का मघन करके एक ऐसा ह्म डूँडा जिससे दोनों देशों का पार स्परिक बिरोध दूर हो गया और दोनों देश फिर स्नह-मून में घाबद्ध हो गए । इसी प्रकार जब कश्मीर में हजरत मुहम्मद साहब के वास को लेकर बिग्रह की घाँधी उठी, तो उसे घान्त करने के लिए शास्त्री जी को ही कश्मीर भेजा गया । शास्त्री जी ने कश्मीर में जाकर जिस कौशल से घोरी गए वास का पता लगाने में सहायता दी और उठी हुई बिग्रह की घाँधी को घान्त किया, उसकी देश के ही नहीं विदेश के पत्रों ने भी मुक्त कठ से सराहना की थी ।

इसी प्रकार काँग्रेस के घन्धर्मत कितनी ही बार दसवीं ग्गड़ों

घोर बिबादों को शांत करने में दास्त्री जी ने अपनी बुद्धि का चातुर्य प्रदर्शित किया है। दास्त्री जी की सत्य अन्वेषिणी बुद्धि उनकी अपनी सम्पत्ति है। इस बुद्धि का उनसे वक्षपन से ही सगाव है। यहाँ हमें उनकी वास्तविकता की एक घटना याद आ जाती है जिसे सामने रखने पर फिर इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता कि दास्त्री जी वास्तविकता से ही अपने बुद्धि-चातुर्य द्वारा सही बात का पता लगाने में बड़े सिद्धहस्त हैं।

यह उन दिनों की बात है, जब दास्त्री जी की अवस्था केवल बारह बप की थी। दास्त्री जी अपने मामा स्वर्गीय विधेश्वरी बाबू के साथ मिर्जापुर जाने के लिये मुगससराय स्टेशन पर गाड़ी पर सवार हुए। विधेश्वरी बाबू के पास सोने के आभूषणों की एक पोटी थी जिसे वे बगम में दबाए हुए थे। मिर्जापुर स्टेशन पर उतरने पर वे गहनों की पोटी रेल के डिब्बे में ही भूल गए। घर पहुँचने पर उन्हें इस बात का स्मरण हुआ कि पोटी तो डिब्बे में ही रह गई। पर अर्थ क्या हो सकता था ? क्योंकि अब तक तो गाड़ी कई स्टेशनों को आगे पार कर गई थी। बेचारे चिन्तित होकर पन्ना पर पड़ गए। दास्त्री जी अर्थ तक विचारों में ही डूबे हुए थे। सोचते-सोचते वे विधेश्वरी बाबू के पास आकर बोले— मामा, क्यों मैं एक बार स्टेशन पर घसकर 'बेटिंग रूम' आदि में देखा लिया जाए ? हो सकता है कि जिस भादमी को पोटी मिली हो, वह मिर्जापुर स्टेशन पर ही उतर गया हो, और बेटिंग रूम में मौजूद हो।"

विधेश्वरी बाबू को शास्त्री जी की बात खँब गई। व शास्त्री जी को साथ लेकर फिर स्टेसन पर गए। विधेश्वरी बाबू तो इधर-उधर देखने लगे पर शास्त्री जी सीधे धुपचाप वेटिंग रूम में जा पहुँचे। घरे, यह क्या ? यह तो सचमुच एक धावमी पोटली सीसकर बैठा है और एक-एक गहने को बड़े ध्यान से देखा रहा है। शास्त्री जी ने झपटकर उस धावमी का हाथ पकड़ लिया और कहा—“यह गहने तो हमारे मामा के हैं।” विधेश्वरी बाबू भी शीघ्र ही वहाँ पहुँच गये। उन्हें जो हर्ष हुआ उसका अनुमान उसी को हो सकता है जिसके सोने के धामूपण बोरी बाने पर पुनः प्राप्त हुए हों। विधेश्वरी बाबू जब तक जीबित रहे, बराबर शास्त्री जी के बुद्धि चातुर्य की प्रशंसा किया करते थे।

पर यदि भाव वे होते तो देखते कि उनके मामाबहादुर के बुद्धि चातुर्य की प्रशंसा सारा देश कर रहा है।

त्याग

शास्त्री जो अनन्य देशभक्त धीर स्यायी हैं। देश की वेदिका पर उठेंगे जिस प्रकार अपने सुसो, धार्काक्षारों और प्राणार्यों की मसि खड़ाई, वह उदाहरण की वस्तु है। देशों की स्वाधीनता के इतिहास में उन नर-पुंगवों के त्याग की बड़ी प्रशंसा की गई है, जो ऐश्वर्य के भक्त में पले थे किन्तु जब मातृभूमि को शोर से पुकार हुई, तो उन्होंने सब कुछ त्यागकर उसके लिए कर्म में मूँज की मेखसा पहन ली। पर भोज्यों के उन दीपकों के त्याग की शोर बहुत ही कम लोगों का ध्यान धाक-पिठ हो सका है, जो देश की ली में केवल जसते रहे हैं—जस-

जस कर काले होते रहे हैं ! शास्त्री जी ऐसे ही एक शीपक हैं !

वाराणसी में प्रथम बार जब वे जेस गए थे तो क्या यह सच नहीं है कि उन्होंने अपनी उस माँ की ममता और स्नेह का भी ख्याल नहीं किया था जो पति की मृत्यु के पश्चात् यही धारा से शास्त्री जी की ओर बहा रही थी ! एक नहीं शास्त्री जी ने ग्यारह-ग्यारह बार जेस की यात्राएँ कीं और वह भी अपनी पत्नी और माँ को अभाव की गोद में छोड़कर अपने छोटे-छोटे बच्चों का निराश्रित त्याग कर !! उपर-परसे घोर घर-द्वार का त्याग तो सरलता के साथ किया जा सकता है पर कोई भी पिता अपने उस बच्चे का छोड़कर कारागार की यात्रा नहीं कर सकता जो ज्वराकृत हो और चारपाई पर लड़प रहा हो ! महाराज दशरथ श्रीराम के वन गमन पर ही शोक बिल्लस हो उठे थे, और इतना शोक बिल्लस हो उठे थे कि उनके प्राणों के तंतु टूट गए । फिर उस देवभक्त जेस यात्री की किन शब्दों में प्रशंसा की जाए, जो अपने बीमार पुत्र को चारपाई पर छोड़कर जेस की यात्रा कर रहा था !

इन पक्षियों के लेखक को उन दिनों भी कई बार शास्त्री जी के घर में जाने का अवसर प्राप्त हुआ है । उनकी माँ, पत्नी और बच्चों से मिलने-जुसने का समय उपस्थित हुआ है । जो कुछ इन माँसों ने देखा है कानों ने सुना है—उनके साम्प्रदाय पर मैं केवल इतना ही कहूँगा कि शास्त्री जी धीर हैं, महान् त्यागी हैं, और अनन्य देवभक्त हैं ! हो सकता है कि कुछ साग

यह कहें कि मैं प्रतिघयावित और घासकिस का घांसस ग्रहण कर रहा हूँ, पर फिर भी मेरे भीतर का शिवत्व यह कहने के लिए बाध्य कर रहा है कि शास्त्री भी उस योमी की भाँति हैं, जो अपनी मजिल पर पहुँचने के लिए अपने सर्वस्व तक की बाजी लगा देता है। शास्त्री जी का वह त्याग ही आज उनके जीवन में बरदान की भाँति पल्लवित और पुष्पित हो रहा है। उनकी महत्यपूण उन्नति ही उनके त्याग का उवसन्त विभ्र है। यदि शास्त्री जी ने त्यागका घांसस ग्रहण न किया होता तो भारत ऐस देस में उनके लिए कभी यह सम्भव नहीं था कि वे अभाव पूर्ण स्थिति में अम्म लेने और रहने पर उस पद पर पहुँचते जहाँ आज वे हैं।

शास्त्री जी राष्ट्रपिता गांधी जी के परम भक्त हैं। गांधी जी के सत्य अहिंसा और सादगी के सखि में उन्होंने पूण स्व से अपने जीवन को ढाला है। वे १९२० मीट्र १९२१ ई० से ही श्रायी पहन रह हैं। केवल वे ही नहीं, उनकी पत्नी और माँ आदि घर के कुटुम्बी भी सादी के ही बस्त्र धारण करते हैं। शास्त्री जी अर्धा भी असाते हैं। वे बचपन से ही शाकाहारी हैं। उनके सभी कुटुम्बी गांधी जी के 'वप्यव' के पथानुयायी हैं। गांधी जी द्वारा असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किए जाने पर शास्त्री जी ने सोरसाह पढ़ना-लिखना छोड़कर उस आन्दोलन में भाग लिया। यद्यपि उस समय शास्त्री जी की अस्वस्था अठारह-उन्नीस बय की थी, परन्तु फिर भी वे जेस गए। जेस

जस कर काले होते रहे हैं ! शास्त्री जी ऐसे ही एक दीपक हैं !

वाराणसी में प्रथम बार जब वे जेल गए थे तो क्या यह सब नहीं है कि उन्होंने अपनी उस माँ की ममता और स्नेह का भी ख्याल नहीं किया था, जो पति की मृत्यु के पश्चात् वही माया से शास्त्री जी की ओर देख रही थी ! एक नहीं, शास्त्री जी ने ग्यारह-ग्यारह बार जेल की यात्राएँ कीं, और वह भी अपनी पत्नी और माँ को अभाव की गोद में छोड़कर अपने छोटे-छोटे बच्चों को निराश्रित त्याग कर ! ! रुपए-पैसे और घर-द्वार का त्याग तो सरलता के साथ किया जा सकता है पर कोई माँ पिता अपने उस बच्चे को छोड़कर बाराणसी की यात्रा नहीं कर सकता जो ज्वरकांत हो और चारपाई पर लटप रहा हो ! महाराज दशरथ श्रीराम के वन गमन पर ही शोक विह्वल हो उठे थे, और इतना शोक विह्वल हो उठे थे कि उनके प्राणों के तंतु टूट गए । फिर उस देशभक्त जेल यात्री की किन शब्दों में प्रसन्नता की जाए जो अपने बीमार पुत्र को चारपाई पर छोड़कर जेल की यात्रा कर रहा हो !

इन पकितियों के लेखक को उन दिनों भी कई बार शास्त्री जी के घर में जाने का अवसर प्राप्त हुआ है । उनकी माँ, पत्नी और बच्चों से मिलने-जुलने का संयोग उपस्थित हुआ है । जो कुछ इन भाईयों ने देखा है, कानों ने सुना है—उनके आचार पर मैं केवल इतना ही कहूँगा कि शास्त्री जी बीर हैं महान् त्यागी हैं, और अनन्य देशभक्त हैं ! हो सकता है कि कुछ लोग

यह कहें कि मैं प्रतिध्याक्ति और भासक्ति का आचल ग्रहण कर रहा हूँ, पर फिर भी मेरे भीतर का शिवत्व यह कहने के लिए बाध्य कर रहा है कि शास्त्री जी उस योगी की भाँति हैं जो अपनी मजिस पर पहुँचने के लिए अपने सर्वस्व तक की बाजी लगा देता है। शास्त्री जी का वह त्याग ही मात्र उनके जीवन में बरदान की भाँति पत्सबित और पूष्पित हो रहा है। उनकी महत्त्वपूर्ण उन्नति ही उनके त्याग का अवलम्ब चित्र है। यदि शास्त्री जी ने त्याग का आचल ग्रहण न किया होता तो भारत ऐसे देश में उनके लिए कभी यह सम्भव नहीं था कि वे अभाव पूर्ण स्थिति में काम लेने और रहने पर उस पद पर पहुँचते जहाँ मात्र वे हैं।

शास्त्री जी राष्ट्रपिता गांधी जी के परम भक्त हैं। गांधी जी के सत्य, अहिंसा और सादगी के साँचे में उन्होंने पूरा रूप से अपने जीवन को ढाला है। वे १९२० और १९२१ ई० से ही खादी पहन रहे हैं। केवल वे ही नहीं, उनकी पत्नी और माँ आदि घर के कटुम्बी भी खादी के ही वस्त्र धारण करते हैं। शास्त्री जी भर्ता भी बलासे हैं। वे वचन से ही शाकाहारी हैं। उनके सभी कटुम्बी गांधी जी के 'बप्पव' के पयानुयायी हैं। गांधी जी द्वारा असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किए जाने पर शास्त्री जी ने सोसाइटी पढ़ना-लिखना छोड़कर उस आन्दोलन में भाग लिया। यद्यपि उस समय शास्त्री जी की अवस्था अठारह-उन्नीस वर्ष की थी, परन्तु फिर भी वे जेल गए। जेल

से झूटने पर वे गांधी जी के रचनात्मक कार्यों में लगे । अछूतो
 छार, ग्राम सगठन हिन्दू-मुसलिम एकता आदि कार्यों में हा
 उन्होंने अपना सब तक का जीवन व्यतीत किया है । गांधी जी
 ने देश की स्वाधीनता के लिए जव-जव रण-यज्ञ की घोषणा
 की शास्त्री जी ने उसमें बड़ी बीरता और साहस से काम किया ।
 उन्होंने जेलों में जेलों के बाहर अपनी गिरफ्तारी के समय,
 पैरोस पर छूटने के समय आदि किसी अवसर पर भी गांधी जी
 के सिद्धान्तों का परिष्कार नहीं किया । वे सदा गांधी जी की
 अहिंसा सत्य और शान्ति के ही अनुयायी रहे हैं ।

पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि उनमें अल्प साहस और
 तेज का अभाव है । जिस प्रकार गांधी जी अपनी 'शान्ति' में
 छिपो हुई शान्ति से लोगों को विस्मित और अकित कर दिया
 करते थे उसी प्रकार शास्त्री जी में भी विस्मयकारिणी और
 प्राणों में आदू का संचार कर देने वाली शान्ति की अपूर्व भावना
 है । पंजाब के वे श्मि । जाला साजवतयम गहोद हो चुके थे ।
 पंजाब की धरती गहोदों के रक्त में रगी हुई साम धूनरो
 झोड़कर इठसा रही थी । सरकार को गर्बन को तनी हुई नसों
 को तोड़ने के लिए देश के कोने-कोने में स्वयंसेवकों की भरती
 की जा रही थी । चारों ओर यह खबर फैली हुई थी कि जो
 भी स्वयंसेवक के रूप में पंजाब की धरती पर कदम रखेगा
 गोरी सरकार के मन्-दानवों की गोशियाँ उसके प्राणों का तन्तु
 तोड़ देंगी, किन्तु फिर भी दस कदम देश के दीवाने मुक्क

स्वयंसेवकों में अपना नाम सिखा रहे थे। शास्त्री जी ने भी अपना नाम स्वयंसेवकों में सिखा लिया। उनके कुटुम्बियों और हितचियों का हृदय काँप उठा। सोच उन्हें समझाने-बुझाने लगे कि वे स्वयंसेवकों में अपना नाम न सिखायें, पर शास्त्री जी अपने निदधय पर दृढ़ रहे। उन्होंने यह कहकर सबका निहत्तर कर दिया कि 'देस की पुकार सबसे मुख्य वस्तु है। देस की पुकार के समझ स्त्री पुत्र और घर-द्वार कुछ नहीं।' पर शास्त्री जी को पंजाब जाने की भावदयकता न पड़ी। इसके पश्चात् ही पंजाब से समाचार आया कि अब स्वयंसेवकों के भजने की आवश्यकता नहीं। आश्चर्य क्या, यदि शास्त्री जी के बीर हृदय को इससे आघात लगा हो।

कई ऐसे घबसर भी आये हैं जब शास्त्री जी की पत्नी को उनका जेल जाना दुःख का प्रसंग बन जाता या और उनकी घाँसों से घाँसू निकल पड़ते थे। शास्त्री जी ऐसे घबसरों पर अपनी पत्नी पर भी असन्तुष्ट होन से न शूके। उन्हें पत्नी का अश्रुपात करना त्रम जाता था। क्योंकि वे देस का सबसे बड़ा यमच्छे थे। कहा जाता है कि उन्होंने अपनी घमपत्नी से बचन लिया है कि वह कभी भी उनकी दम मन्त्रि के कार्यों में बाधक शिद्ध न होगी। शास्त्री जी की घमपत्नी आज तक अपने बचन का निर्बाह बड़ी दृढ़ता और तामयता के साथ करती आ रही है। शास्त्री जी जो कुछ करते हैं करते हैं, वे अपना घर न कभी कुछ भी नहीं कहतीं। घमा

और उनकी मुस्कुराहट में एक ऐसी शक्ति है जो मनुष्य के मर्म को भी स्पर्श कर सकती है, और वास्तविकता की याह लगा सकती है। यहाँ शास्त्री जी के 'मौनानाम' की शर्मा करते हुए हमारी दृष्टि दुर्योधन की उस सभा की ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रहती जिसमें कौरवों और पाण्डवों के बड़े बड़े योद्धा विराजमान थे और सबके बीच में दुःशासन द्रोपदी को नग्न कर रहा था। द्रोपदी की शील-मुकार पर भीम रह-रहकर सबल रहा था और युधिष्ठिर को भी खरी-खोटी सुना रहा था। भीम की उछल-कूब से कर्ण को भी ताव भा गया। पर दुर्योधन ने कर्ण को खान्त करते हुए कहा—“भरे कर्ण तू व्यय भीम को इतना महत्व दे रहा है। जसते हुए तवे पर पड़ी हुई पानी की बूँदों के समान छनछनाते हुए भीम से मुझे रक्षमात्र भी डर नहीं है मुझे डर तो है उस धर्म से जो 'गुमसुम' चुपचाप बैठा हुआ है, और बोल कुछ नहीं रहा है। मैं यह नहीं कहता कि शास्त्री जी धर्म हैं, पर मैं यह अवश्य कहूँगा कि शास्त्री जी के 'मौन' और समयित वार्तानाम के भीतर एक ऐसी ग्राहिणी शक्ति छिपी रहती है जो क्षीय ही सत्व को पकड़ लेती है।

एक बार शास्त्री जी ने स्वयं ससद में अपनी इस शक्ति की ओर इस प्रकार संकेत किया था— मैं छोटे कद का, एक दुबला-पतला मनुष्य अवश्य हूँ पर किसी के शरीर को देखकर उसके बल का अंदाज लगाना उचित नहीं है। शरीर के प्रति

रिक्त मनुष्य के पास आत्मा नाम की एक वस्तु भी होती है। मैं उस व्यक्ति को वीर और बसवान मानता हूँ जिसके शरीर में बसवान आत्मा का निवास होता है और मैं यह सकता हूँ कि मेरे शरीर के भीतर एक ऐसी ही आत्मा का निवास है।'

वस्तुतः शास्त्री जी के भीतर सशक्त और दृढ़ आत्मा का निवास है। इस आत्मा का ही यह जोहर है कि शास्त्री जी बड़े-बड़े संकटों में भी अपने धर्म को टूटने नहीं देते और उस आत्मा का ही यह प्रघाप है कि वे भुपचाप विष की कड़वी घूँट पी जाते हैं। संघ्या का समय था। एक दिन शास्त्री जी के एक मित्र उनसे मिलन के लिए आए। शास्त्री जी ने उनके पास उपस्थित होकर उनका आदर-मस्कार किया। वे स्वयं उनके लिए अपने घर के भीतर से नाश्ते का सामान लेकर बठक में गए। बड़े प्रेम से वासबीठ हुई। पर उन्होंने शास्त्री जी से समझ एक ऐसी बात रखी जिसे पूर्ण करना शास्त्री जी के वध की बात नहीं थी। शास्त्री जी के द्वारा प्रसन्नता प्रकट किये जान पर वे उबस पड़े और उन्हें खरी-खोटी सुनान लगे। शास्त्री जी उनके पास बठकर भुपचाप कड़वी घूँट पीते रहे। वे खरी-खोटी सुनाते हुए अपने-आप उठ पड़ और बाहर निकल गए। शास्त्री जी ने उन्हें दोनों हाथ जाड़कर प्रणाम किया। बदायित् ही ऐसा कोई मंत्री हो, जो इस प्रकार भुपचाप कटूकृतियों के लोभे घर सहम करने की क्षमता रखता हो।

घमी षोड़े हो दिन हुए, शास्त्री जी का जब नेता के रूप में वरण हुआ, सो विदेशी सम्वाददाताओं और फोटोग्राफरों की उनकी कोठी पर मीड़ लग गई। सबने चारों ओर से शास्त्री जी को घेर लिया। प्रश्नों की झड़ी सी लग गई। एक से एक कूदल बे—निष्णात बे। अपनी अपनी बायरी में पहले ही से सोच-सोचकर प्रश्न निरूद्धकर माये बे। शास्त्री जी ने बारी-बारी से एक-एक के प्रश्न का उत्तर बड़े ही धैर्य और बड़ी बुद्धिमानी क साथ दिया। वे उनके प्रश्नों को सुन कर मुस्कुरा दिया करते बे और फिर उनका उत्तर ऐसी मृदुता के साथ देते बे कि बे उनका मुँह ताकने लगते बे। कॉफ़ेस समाप्त होने पर एक व्यक्ति न जो बहाँ सड़ बे, एक विदेशी सम्वाददाता से प्रश्न किया—“कहिण हमारे मए प्रधान मंत्री को प्राप लोगों ने कसा पाबा ?” उसने निम्नांकित उत्तर देकर वहाँ पर सड़ हुए सब लोगों को धकित कर दिया—“इस छोटे कद के भीतर एक मजबूत का ब्यक्तित्व है।”

सचमुच शास्त्री जी के छोटे कद और उनके मौन तथा समयित बातसाम में एक महान् ब्यक्तित्व की ही ऋसक मिसती है। साप्ताहिक हिन्दुस्तान न श्री हीरालाल जी चोत्रे ने शास्त्री जी के महान् ब्यक्तित्व का चित्र निम्नांकित शब्दों में लीखा है—‘ब्यक्तित्व की कोई एक निश्चित परिधि या सीमा नहीं है और न उसकी सही परिभाषा की कोई निश्चित

मितमात्री

दब्यावसी ही है। व्यक्तित्व उभरता है जीवन-दर्शन, त्याग, तप, आभरण और कर्तव्यों से। जाति धर्म पद पहनावे आदि से व्यक्ति प्रभावशाली हो सकता है पर व्यक्तित्व की छाप के पीछे कुछ अतनिहित बहिष्कृत्य ही व्यक्तित्व को सवारते भीर उभारते हैं। देखने में शास्त्री जी का व्यक्तित्व उस केवल बाह्य प्रदर्शन है। व्यक्तित्व की परत जिसका आधार तो उनमें अतनिहित वह मौसिकता स्वाभाविकता और सहजता है, जिसके घस पर आज इस विश्वास जनतात्रिक देश ने उन्हें इतने उत्तरदायी पद पर प्रतिष्ठित किया है।”

सरल एव उदार

शास्त्री जी बड़ ही सरस और सीधे-सादे ब्यक्ति हैं। उनमें आडम्बर और अहम् नाम को भी नहीं है। प्रधान मंत्री जैसे महान् पद पर आसीन होने के पश्चात् भी उनके रहन-सहन में और उनके स्वभाव में ठनक भी हेर-फेर नहीं हुआ है। वे जिस प्रकार पहले धोती और कुर्ता पहनते थे उसी प्रकार आज भी वे धोती और कुरता ही पहनते हैं। पाड़े के दिनों में, जब मयानक शीठ पड़ता है, तब उनके धदन पर बोट अवश्य दिखाई पड़ता है। पर आज भी वे 'ओवरकोट' आवि का इस्ते-मास नहीं करते। उनके पास आज भी इस प्रकार की चीजें

नहीं हैं। अपनी कुछ दिन पूर्व जब 'बाल काण्ड' के सम्बन्ध में उन्हें कश्मीर जाना पड़ा था, तो वे शीत से बचन के लिए श्री नेहरू से 'धोवरकोट' मांगकर ले गए थे। प्रधान मंत्री के निर्वाचन के पदधातु ही इम्प्लाइ जाने का जब प्रश्न आया, तो उनके सामने पहनावे की समस्या ने भी एक विकट रूप धारण कर लिया। विचार विमर्श होने लगा कि वे इम्प्लाइ कौन-सी चीज पहनकर आयेंगे? क्या पन्ट और कोट! पर वास्त्री जी ने ता पैंट और कोट की चीज बड़े बिवाह के दिन को छोड़कर कभी खुदीदार पायजामे का भी व्यवहार नहीं किया। यदि वास्त्री जी संयोगतत् सम्बन्ध न हो जाते और राष्ट्र मण्डल को बैठक में सम्मिलित होने के लिए इम्प्लाइ जाते ता कदाचित् उनको वग भूपा नहीं हासी, जो आज तक रही है। नेहरू जी के दार-दार सम्बन्ध और उपहास किए जाने पर भी जब वास्त्री जी ने अपनी 'सनातन' वग भूपा का परिस्वाग नहीं किया तो वे कदाचित् ही इम्प्लाइ जाने पर अपनी बेम-भूपा का परिस्वाग करते। वेद भूपा की सादगी के क्षेत्र में वास्त्री जी गांधी जी और राजपि टण्डन जी के पथानुयायी हैं। जिस प्रकार गांधी जी और राजपि टण्डन जी सदा भारतीय वग भूपा को ही महत्व देते रहे हैं, उसी प्रकार वास्त्री जी भी भारतीय वग भूपा में ही आस्था है।

वास्त्री जी केवल वेद-भूपा में ही सादे और सरस नहीं हैं, उनका हृदय भी बड़ा ही सरस और निदल्लम है। वे जिस

प्रकार पहले लोगों से हँसते हुए सरसता और निष्कपटता के साथ मिलते-जुलते थे वही सरसता वही निश्छलता और वही निष्कपटता आज भी उनमें मौजूब है। पदों और वेमव के सिलार पर पहुँचने पर बड़-बड़े महामानवों को भी बदसते हुए देखा गया है। पर छास्त्री जी के भीतर ऐसी महानता है कि उसे पद और वेमव का अहम् स्पष्ट तक नहीं कर सका है। गोस्वामी तुमसीदास जी ने रामचरित मानस में भरत के चरित्र का अंकन करते हुए लिखा है कि चाहे ससार में 'असमव' घटनाएँ समव' के रूप में परिवर्तित हो जाएँ पर भरत के मन में राज्य भद्र का सचार नहीं हो सकता। भरत हमारे अतीत कास के अष्ट महामानव थे। पर हम तो आज गोस्वामी जी के उक्त कथन को छास्त्री जी में अतिवर्धित होते हुए देख रहे हैं। संभव है कुछ लोग इसे अतिशयोक्ति कहें पर जो लोग शास्त्री जी के भीतरी और बाहरी जीवन से परिचित हैं वे अज्ञानता की धुंध में यही कहेंगे कि शास्त्री जी भरत के समान ही पद की गुरुता में भाँ अन्वये मन को—अपनी कामनाओं को बाँध कर रख सके हैं।

छास्त्री जी भीतर और बाहर एकसमान ही व्यवहार करते हैं। वे अपने घर के भीतर जब अपने पुराने मित्रों परिचितों और स्नेहियों को देखते हैं, तो अपने आप ही उनके पास बैठ जाते हैं और कुशल समाचार पूछते हैं। कभी-कभी खाना खाते समय वे लोगों की भास में झुककर देखते हैं, और पूछते

सरल एवं उबार

हैं, क्या क्या-खा रहे हैं ? बच्चों को खेसते हुए देखकर उन्हें अपनी गोद में उठा लेते हैं और उनके साथ मनोबिनोद करते हैं। कभी-कभी अपने कमरे में फर्श पर घटाई पर बैठकर बच्चों के साथ खेसते हैं। बच्चों के साथ खेसने में वे भेद भाव नहीं करते। वे जिस प्रकार अपने बच्चों को प्यार करते हैं उसी प्रकार दूसरे लोगों के बच्चों के लिए भी उनके मन में प्यार का सागर छसकता रहता है। वे अपने नीकर रामनाथ के बच्चों को भी अपने बच्चों के समान ही प्यार देते हैं। बच्चों से प्यार करने में वे श्री नेहरू के समान ही मृदुल और स्नेह मय हैं। जिस प्रकार बच्चों को देखते ही श्री नेहरू का हृदय स्नेह से उमड़ पड़ता था, वही गुण शास्त्री जी में भी है।

शास्त्री जी में प्रहम् का सबसेना तक नहीं है। बदापित ही उनके मन में कभी यह बात घाई हो कि वे मन्त्री और प्रधान मन्त्री हैं। कई बार ऐसे प्रबसर उपस्थित हुए हैं जय उनकी वार सराव हो गई है, या देर से पहुँची है, तो शास्त्री जी बिना किसी हिषक के पदस ही दफ्तर से घर की ओर बस पड़े हैं। कई वार जाड़े के दिनों में लोगों ने उन्हें बम्बल घोड़-कर इण्डिया गेट के पास घूमते हुए भी देखा है। मिसने-जुसने और वातचीत करने में भी शास्त्री जी बड़े सरस हैं। वे प्रायः रात में घाठ-नी बजे मेंट मुसाकात करते हैं, मने ही रात के वारह बज जायें, पर जब तक वे भागन्तुकों से मुसाकात नहीं कर सेंगे, तब तक धाराम नहीं करेंगे। मेंट-मुसाकात के लिए उनसे सेन्टरी

सूची प्रबन्ध तयार करते हैं पर शास्त्री जी अपने को उससे मुक्त रखते हैं। कभी-कभी वे ऐसे लोगों से बहुत पहले मिलते हैं जिनका नाम सूची में नहीं होता पर जो उनसे मिलने के लिए व्यग्र रहते हैं। यहाँ शास्त्री जी को मिलनसारी और उनकी सरसता से सम्बन्ध रखने वाली एक घटना का उल्लेख कर देना अनुचित न होगा—एक बार बहुतसा विदेश मंत्री शास्त्री जी से मुसाकात करने के लिए उनके घगने पर गए। मुसाकात के लिए कई दूसरे लोग और ऊँचे अधिकारी भी प्रतीक्षा में बैठे हुए थे। शास्त्री जी बाहर निकलकर इन सभी लोगों से भट-मुसाकात करने लगे। सहसा शास्त्री जी की दृष्टि बृज के नीचे बैठे हुए एक वृद्ध पर पड़ी जो अपने जीण-शीर्ण कपड़ों में शास्त्री जी की ओर बड़ी श्रद्धा और उत्कृष्टा से देख रहा था। शास्त्री जी शीघ्र ही लोगों से क्षमा माँगकर उस वृद्ध व्यक्ति के पास जा पहुँचे। वृद्ध की आँसू छसछसा उठीं। उसने बड़ी श्रद्धा से अपनी बगल से एक पोटसी खोली और उसे शास्त्री जी के सामने उपस्थित किया। उसमें उसका बिन के हरी मटर के दाने थे। शास्त्री जी ने बड़े प्रेम से दो-तीन दाने अपने मुँह में डाले और शेष को अपने बगले के भीतर भेज दिया।

वेश भूषा की भाँति ही शास्त्री जी का पहना-पीना भी बड़ा सादा है। वे प्रायः दिन के दो बजे के लगभग सादा भोजन लेते हैं। भोजन लेने में वे गांधी जी के नियमों का पालन करते हैं। वे प्रायः ऐसे लोगों को बेतावनी भी दिया करते हैं जो

धरम एवं उदार

गरिष्ठ भाजन सेते हैं और भोजन म अनियमितता धरतते हैं। उनका बहना है कि स्वस्थ रहने के लिए सादा भोजन धमून के समान ही प्रभावपूण होता है। धास्त्री जी के भोजन में खिचड़ी वे प्राय सिया करते हैं। पाव रोटी भी वे नापते मे सेते हैं। हरे मटर की पूड़ी उन्हें बहुत धच्छी लगती है। धास्त्री जी का भोजन उनकी धमपत्नी स्वय ही तयार करती है। उनके भोजन म वे धड़ी रुचि सेती हैं। धास्त्री जी प्राय धपने धर म भोजन करते हैं। भोजन करने के समय उनकी धमपत्नी उपस्थित रहती है। धास्त्री जी की दोनों धन्याएँ भी धास्त्री जी के लाने-मीन का बहुत खयाल रखती हैं। धास्त्री जी की पुत्रधपू श्री हरेकृष्ण की धमपत्नी भी धास्त्री जी के भोजन और उनकी देल रेल म धधिक रुचि रखती हैं। यद्यपि धास्त्री जी किसी की देल रेल और सेवा-धुधुपा की धपेला नहीं करते, पर उनके परिवार के सबके हाप उनकी सेवा के लिए उस्तुक रहते हैं।

धास्त्री जी बडे उदार और सहृदय हैं। पुंसिम मत्री से सेबर प्रधान मत्री के पद तक उन्होंने न जाने कितने प्रभाव-धस्तों, कष्ट-मीडिता मित्रों, और स्नहियों की सहायता की है। किसी भी भी दुखद बहानी को सुनकर वे धिरता में पड़ जाते हैं और उसे दूर करने के लिए निदान खोजने लगते हैं। जहाँ तक उनका बल धसता है वे लोगों की सहायता करने में कर्म

नहीं करते। मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जो शास्त्री जी की सहायता से ही अपने जीवन को स्थिर रख सके हैं। कई ऐसे लोग हैं जो शास्त्री जी से मासिक के रूप में भी सहायता पाते हैं। कई सस्यार्थी भी शास्त्री जी बराबर सहायता किया करते हैं। शास्त्री जी और उनके कुटुम्बियों की भर्मप्रियता को सुनकर, प्रायः साधु-संन्यासी, महात्मा धार्मिक ब्राह्मण, और दीन-हीन जब उनके पास पाते हैं। देर भसे ही हो जाय पर शास्त्री जी सबसे भिसते हैं, और सबकी यथोचित सहायता भी करते हैं।

शास्त्री जी की उदारता और सरसता के कारण लोग उन्हें घोसा भी वे जाते हैं। पर शास्त्री जी ऐसे लोगों को सीधे ही पहचान भी जाते हैं। और जब पहचान जाते हैं, तब फिर उनकी मूर्ति अपने हृदय पटल पर अंकित कर लेते हैं। अपनी बातचीत में अपने व्यवहार में, वे उनपर अपने मन का भाव प्रकट नहीं होने देते, पर फिर कभी वे उन्हें अपने हृदय की सहानुमति और अपने हृदय का स्नेह नहीं देते। मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जो अपने कपटपूर्ण व्यवहार के ही कारण शास्त्री जी के स्नेह और उनकी सहानुमति से वंचित हो गए हैं। प्रिय से प्रिय व्यक्तियों को भी शास्त्री जी कपटपूर्ण व्यवहार करने पर अपने हृदय से पृथक् कर देते हैं। वे उन व्यक्तियों से अधिक प्रसन्न होते हैं, जो सच्चाई के साथ अपनी बुराई भी प्रकट कर दिया करते हैं। ऐसे लोगों को अपराध

करने पर भी प्राय वे क्षमा कर दिया करते हैं।

शास्त्री जी की उदारता और क्षमाशीलता के प्रसंग में हमें उनके जीवन की उस समय की दो घटनाएँ याद आ जाती हैं, जब वे उत्तर प्रदेश में पुलिस मंत्री के पद पर प्रतिष्ठित थे—'एक दिन शास्त्री जी वहीं दौरे पर जा रहे थे। अचानक उनकी कार छराव हो गई। वे निकट के घाने में रिपोर्ट लिखाने या सहायता के लिए गए। सयोगत घाने का इलाज दारोगा उस समय घाने पर नहीं था। शास्त्री जी ने मुर्गी के सामने अपनी कठिनाइयाँ रखीं। पर मुर्गी ने उन्हें झिड़क दिया और कहा, इस प्रकार के बहुत से लोग आते हैं और अपनी इस प्रकार की कठिनाइयाँ बताते हैं। मैं कुछ नहीं कर सकता। शास्त्री जी घाने से निरस ही रहे थे कि इपार्न आ गया। वह शास्त्री जी को पहचानता था। शास्त्री जी को देखते ही उन्हें मूक कर ससाम किया, और फिर पसक मारते मारे घाने में बिजली की भाँति पत्रर फँस गई कि पुलिस मंत्री जी घाने में। मुर्गी जी को तो प्राण काँप गए। वे दौड़कर शास्त्री जी के पास पहुँचे और बोले—'हुजूर मूल हा गई।' शास्त्री जी ने हँसकर मुर्गी जी की पीठ पपपपाई और फिर वे चल दिए।'

दूसरी घटना आगरे की है। शास्त्री जी रेल द्वारा आगरे पहुँचने वाले थे। स्टेशन पर स्वागत करने वालों की मीड़ जमा थी। बड़े-बड़े मागरिक, कायमजम और ठेके धपिकारी

स्टेशन पर उपस्थित थे। गाड़ी स्टेशन पर पहुँचते ही लोग प्रथम खेणो के डिब्बों की ओर दौड़ पड़े। पर शास्त्री जी तो तीसरे दर्जे के डिब्बे में थे। वे डिब्बे से उतरकर गेट की ओर चल दिए। गेट पर कांसटेबिल खनात था। उसने शास्त्री जी को बाहर जाने से रोक दिया। कहा 'हमारे पुलिस मंत्री जी इसी गाड़ी में आये हैं। वे अब तक बाहर नहीं निकल आयेगे, किसी को बाहर नहीं जाने दिया आयागा।' शास्त्री जी चुपचाप गेट पर एक घोर लड़े हो गए। सहसा पुलिस कप्तान को उनपर दृष्टि पड़ी और वे दौड़कर उनके पास आ पहुँचे। कप्तान ने शास्त्री जी का अभिवादन किया। अब तो कांसटेबिल के देवता कूँब कर गए। शास्त्री जी ने आगे बढ़कर उसका भी पीठ थपथपाई। और फिर वे अग्रद्वारों के बीच में गेट के बाहर निकल गए।

शास्त्री जी की उदारता और क्षमाशीलता ने ही उन्हें बिरोधियों के बीच में भी आदर और प्रेम का पात्र बनाया है। कितने ही ऐसे लोगों को मैं जानता हूँ, जो राजनीति के क्षेत्र में शास्त्री जी के प्रतिस्पर्धी हैं पर व्यक्तिगत रूप में वे शास्त्री जी के प्रति आदर ही प्रदर्शित करते हैं। कांग्रेस में कितने ही ऐसे लोग हैं जो शास्त्री जी की उन्नति से उनसे ईर्ष्या भी करते हैं। पर अब शास्त्री जी के गुणों को खर्चा चलती है सब उन्हें भी मौन होकर मस्तक झुका सेना पड़ता है।

जन्म एवं बाल्यावस्था

दासत्री जी का जन्म १९०३ ई० में २ अक्टूबर के दिन मुगलसराय में उनके नाना श्री हजारीलाल जी के घर पर हुआ। हजारीलाल जी मुगलसराय में रेनबे स्कूल में प्रधानाध्यापक थे। दासत्री जी माई के रूप में प्रकटे हैं। पर उनकी दो बहनें हैं जिनमें एक का नाम श्रीमती सुन्दरी देवी और दूसरी का नाम श्रीमती कलाशबती है। श्रीमती सुन्दरीदेवी इस समय भी मौजूद हैं पर छ-सात बय हुए, श्रीमती कलाशबती का स्वर्गवास हो गया। श्रीमती सुन्दरीदेवी का विवाह छपरा में हुआ था। उनके पति श्री रामचरण

हाई कोर्ट के सुप्रसिद्ध बकीरों में से थे। पर दुःख है कि प्रत्या
 बस्या में ही उनका स्वर्गवास हो गया। उनके पुत्र श्री शंकर
 सरण जी उच्च शिक्षा प्राप्त ऊँचे विचार के व्यक्ति हैं।
 वे भाजकस मृगिर में जिलाधीश के पद पर प्रतिष्ठित हैं।
 स्वयं सुन्दरीदेवी सुप्रसिद्ध कांग्रेस कार्यकर्त्री हैं। गांधी जी
 के रचनात्मक कार्यों में उनकी अधिक रुचि है। भारतीय स्वा
 योन्ता के आन्दोलन में भी वे भाग ले चुकी हैं और देश
 सेवा के पथ पर विविध संकटों का सामना भी कर चुकी हैं।
 वे भाजकस पटना में रहती हैं बिहार बिधान सभा की सदस्या
 हैं। पिछले चुनावों में भी उन्हें विजय प्राप्त हुई थी। शास्त्री
 जी की दूसरी बहन सुथी कसासवती का विवाह मान्जोपुर में
 हुआ था। कसासवती की सन्तानें भी ऊँचे पदों पर हैं और
 समाज में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा है।

शास्त्री जी की बाल्यावस्था मुहलसराय, मिर्जापुर और
 रामनगर में व्यतीत हुई। बाल्यावस्था में उनके माना ही उनके
 एकमात्र आभार थे। घत वे कमी मिर्जापुर और कमी मुहल
 सराय में अपनी माता जी के पास रहते थे। कमी-कमी राम
 नगर में भी रहते थे। बचपन में भी शास्त्री जी बड़े सीधे-साधे
 और सरल थे। वे प्रायः भुपचाप रहते थे। अधिक न बोसने
 की आदत उनमें बचपन से ही है। पर कमी-कमी शरारत
 करने से भी बाज न आते थे। एक बार वे अपनी शरारत के
 कारण ही, काशी के मणि-कणिका के कूण्ड में डूबते-डूबते

बच गए थे। वे अपनी माता जी के साथ गंगा-स्नान के लिए गये थे। उनकी माता जी उन्हें गंगा के तट पर बिठाकर गंगा में स्नान करने लगीं। शास्त्री जी बुपचाप अपने स्थान से उठे, और उस कुण्ड के पास जा पहुँचे, जिसे मन्दि-कणिका कुण्ड कहते हैं। उसकुण्डताबस कुण्ड के भीतर भाँकने लगे। कुछ लोगों ने दौड़कर उन्हें पकड़ लिया। नहीं तो घास्त्रय क्या कि वे कुण्ड के भीतर कूद पड़ते।

शास्त्री जी की वास्त्यावस्था काशी के दारानगर नामक मुहल्ले में भी व्यतीत हुई। दारानगर में शास्त्री जी की मौसी रहनी थी। उनकी मौसी का नाम श्रीमती क्यामप्यारी और मौसा का नाम श्री रघुनाथप्रसाद था। श्री रघुनाथ-प्रसाद ऊँचे विचार के सहृदय व्यक्ति थे। आठ बय की अवस्था में शास्त्री जी दारानगर में रहने लगे थे। पर कभी-कभी वे रामनगर भी जाते थे।

शास्त्री जी की वास्त्यावस्था की दो घटनाएँ बड़ी रोचक, गिहाप्रद और प्रेरणादायिनी हैं। घट उनका उत्सेख करना यहाँ अनुचित न होगा। पहली घटना उस समय की है, जब शास्त्री जी की अवस्था पाँच-छः वर्ष की थी। एक दिन शास्त्री जी स्नान में छुट्टी होने के पश्चात् अपने साथियों के साथ घर की घोर लौट रहे थे। माग में एक बगीचा पड़ता था, जिसमें घास के फस लटक रहे थे। फसों को देखते ही लड़कों के मुँह में मानो भर आया और वे बगीचे में

फर्नों पर हाथ साफ करने लग । पर शास्त्री जी बगीचे के बाहर ही खड़े रहे । सहसा एक साथी योम उठा—“नन्हें, तुम भी क्यों नहीं भ्राम छोड़ते ?” शास्त्री जी का बचपन में प्यार का नाम नन्हें था । उनके घर के मौज और संगी-साथी उन्हें प्रायः इसी नाम से पुकारा करते थे । शास्त्री जी भी अपने साथी के प्रोत्साहन से बग़ाब में पहुँचे । पर उन्होंने फर्नों पर हाथ नहीं लगाया । उन्हें गुलाब का फूल बहुत सुन्दर लगा और एक गुलाब का फूल उन्होंने तोड़ लिया । इसी समय बगीचे के मासी की सड़कों पर दृष्टि पड़ी । वह हाँक दकर दौड़ा । सड़के नाग लड़े हुए । पर शास्त्री जी अपने स्थान पर जहाँ के महाँ खड़े रहे । मासी ने उन्हें पकड़कर एक चाँटा खड़ दिया । शास्त्री जी रो पड़े और सुवकते हुए बोले—

‘सुमन मुझे चाँटा क्यों लगाया ? क्या तुम्हें माझूम नहीं है कि मेरा बाण — है ? मासी ने इतना सुनते ही शास्त्री रोमको टाँककर कसकर लगाया, और कहा— ‘फिर एकमात्र करता मासी चाहिए । क्योंकि तुम्हें सबसे सराय भोले हैं जब चाहिए ।’

नगर में भी एक दिन शास्त्री जी के प्राणों में हिमोर पवा और सरसों सावियों के से मन उस घटना को सोचत की घातक प्रतीति पड़ता । अथवा मुझे सबसे अधिक करमे से भी ७ को देखते ही अथवा मुझे सबसे अधिक कारण ही, स्टाँके में मुसकर

शास्त्री जी बचपन

की सीड़ियों को पार कर गए थे—“उन दिनों घाव का नाति ही रामनगर में मेला मगा करता था। पर घाव की नाति उन दिनों रामनगर जाने के लिए पुल नहीं बना था। उन दिनों जिस भी रामनगर जाना होता था या रामनगर से काशी जाना होता था, उस नाव का ही सहारा लेना पड़ता था। एक दिन घाम्त्री जी भी अपने कुछ साथियों के साथ मेला लगाने के लिए रामनगर गए। वाम होने पर अब मला उनाल हो गया, ता माग नावों पर बैठकर अपने घर सौट आए। पर घाम्त्री जी बड़ी देर तक धुपचार गंगा के छट पर बैठे रहे। उनके कई मित्रों और परिचितों ने उनसे बचने के लिए कहा पर फिर भी वे धुपचार अपने स्थान पर बैठे रहे। उनका कारण यह था कि उनके पास नाव का उनकाई देने के लिए पैसे नहीं थे। यद्यपि घाम्त्री जी चाहते तो वही घाम्त्री जी के किसी नाव पर बैठकर उस पार जा सकते थे। क्योंकि नाव के कई मन्नाहूँ भी उनके परिचित थे। पर उनका सहायी स्वभाव न उन्हें ऐसा न करने दिया। वे बड़ी देर तक गंगा के किनारे पर बैठे रहे और माय-विचार करते रहे। अन्त में उन्होंने अपने साहस और पुरुषार्थ का प्रायश्चित्त किया। वे गंगा में कूद पड़े, और तरते हुए उस पार जा गए। उस समय गंगा जी बाढ़ पर थी। यही हुई गंगा में जिसने भी घाम्त्री जी को तरकर उस पार जाते देखा उनका माहृग की इन्द्र-नूरि प्रगसा की।

महामुद्र के दिनों में भारतीय नेताओं को यह वचन दिया था कि महामुद्र में विजय प्राप्त करने के पश्चात् वे भारत को धीपनिवेशिक स्वराज्य दे देंगे। अंग्रेजों के इसी आश्वासन पर भारतीय नेताओं ने प्रथम युद्ध में लड़कर अंग्रेजों के पक्ष का समर्थन किया। अंग्रेजों ने अपनी विजय के लिए स्वतन्त्रता पूर्वक भारत को धन और जन-शक्ति का उपयोग किया। परिणामस्वरूप अंग्रेज विजयी हुए। किन्तु जब युद्ध समाप्त होने के पश्चात् भारतीय नेताओं ने धीपनिवेशिक स्वराज्य की मांग की, तब अंग्रेज अपने वचन से मुकर गये। कुछ देने की कौन रहे उल्टे वे कड़े-कड़े कानूनों के द्वारा स्वाधीनता की प्रवृत्ति को कुचलने लगे और सभाओं तथा जुसुसों पर रोक लगा कर नेताओं को बन्दी बनाने लगे। परिणामतः भारत में एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक असन्तोष की भाँधी बौड़ उठी। गांधी जी भारत की राजनीति के रगमथ पर धा चुके थे। दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के अमसिद्ध अधिकारों को लेकर ब्रिटेनी शासन से उन्होंने जो संघर्ष किया था, उससे भारत के कोने-कोने में उनका नाम मूँच उठा था और भारतीय जनता ने उनमें अपनी श्रद्धा के साथ ही साथ अपनी आशा और आकांक्षाओं को केन्द्रित कर दिया था। अंग्रेजों के कठोर कानूनों, और उनके दानवी दमन चक्रों ने गांधी जी की आत्मा को भी क्षुब्ध कर दिया। उन्होंने अंग्रेजों को बार-बार चेतावनी दी। पर अंग्रेज अपने दमन चक्र से वाज म भ्राए। अन्त में

उन्होंने विवश होकर भारतीय जनता का धाड़ान किया—
 'भारत की स्वाधीनता के लिए अपने-अपने छासत का बहिष्कार
 करो। विदेशी कपड़ों को छोड़ो, स्कूल-कामेजों में पढ़ाई बन्द
 करो, और न्यायालयों में घरना दो।'

गांधी जी के धाड़ान पर भारत के कोने-कोने में असहयोग
 का पाण्डवजन्य बज उठा। लोग बहुमूल्य विदेशी कपड़ों की
 होसियाँ जमाने लगे। दस के दस में युवक स्त्रियाँ, कन्याएँ,
 घूड़े और वस्त्रे अपने-अपने घरों से निकलकर विदेशी कपड़ों
 और धराब की दुकानों पर पिकेटिंग करने लगे। विद्यार्थियों
 ने स्कूल और कामेज छोड़ दिए। बकीसों और बड़े-बड़े बरि-
 स्ट्रों ने अपनी-अपनी प्रेक्टिस बन्द कर दी। स्वर्गीय पब्लिश
 मोतीराम मेहरू, स्वनामधन्य श्री बबाहरसाल मेहरू, स्वर्गीय
 डा० राजेन्द्रप्रसाद और स्वर्गीय देवचन्द्रु चित्तरजनदास तथा
 स्वर्गीय सरदार बल्लभ भाई पटेल आदि कितने ही बड़े-बड़े
 बकीस, नेता और बिद्वान गांधी जी के धाड़ान पर अपने-अपने
 काम-काज को छोड़कर स्वाधीनता के रण-स्थल में बूद पड़े।
 चारों ओर जीवन और जागृति की सहर सी दीड़ गई। ऐसी
 सहर बौड़ पड़ी, जिसने सबके प्राणों में हिसार पवा कर दी—
 सबकी रगों में एक अद्भूत जोस का रव-सा गुंजा दिया।

गास्त्री जी की अबरमा उस समय सासह-सत्रह बप की थी।
 कठिनाइयों की खाइयाँ भी उनके समय थीं, पर उनके जीवन के
 माबी दवता ने उनके प्राणों में भी देस भक्ति का दास फूँका और

वे भी बिना किसी सोच-विचार के अपनी पढ़ाई लिखाई छाड़ कर गांधी जी के आह्वान पर रण-स्वल्प म कूद पड़े ! उनकी माँ ने हितापियों ने और उनके सरक्षकों ने उन्हें रोकने का प्रयास किया उन्हें समझने की चेष्टा की, पर सब निष्फल । पर्व की घोट में बठा हुआ शास्त्री जी का भावी देवता अब उनका हाथ पकड़ चुका था । शास्त्री जी असहयोग की धाँधी में उड़ उड़कर देश प्रेम का गीत गाने लगे— 'कभी शराब की दूकान पर पिकेटिंग, कभी विदेशी बस्त्रों की होसी, और कभी पुसूस तथा सभा का संगठन । अन्नकों का दमन चक्र तीव्र गति से चल रहा था । बड़-बड़े नेता बन्दी बनाए जा चुके थे । साठियों और गोलियों की वर्षा रोड़ ही हुआ करती थी । गिरफ्तारियों की भी धूम-धाम थी । शास्त्री जी भी गिरफ्तार हुए और ढाई वर्ष क लिए जेल में काम दिए गए । यह शास्त्री जी की पहली जेल यात्रा थी । यहीं से शास्त्री जी के राजनीतिक जीवन का प्रथम अध्याय भी प्रारम्भ होता है । शास्त्री जी की भाँति ही भारत के कितने ही बड़-बड़ नेताओं ने भी असहयोग आन्दोलन से ही राजनीति में प्रवेश किया । उनमें कितने ही भारत के शिक्षक के नेता बनकर अपने नाम को अमर कर गए हैं और कितने ही अब भी बिद्यमान हैं । शास्त्री जी उनमें से एक हैं ।

काशी विद्यापीठ में

१९२२ ई० में बीरीचौरा का हत्याकांड हुआ । गांधी जी

ने उससे झुझ होकर असहयोग आन्दोलन बन्द कर दिया । पर अब तो स्वाधीनता की घाग पदा हो चुकी थी । असहयोग आन्दोलन में जिन लोगों ने देश के खरणों पर अपना सब कुछ सुटा दिया था, अब उनके लिए स्वाधीनता की अन्तिम मजिद पर पहुँचने के प्रतिरिक्त कोई आरा न था । लोग अब सम्बी-सम्बी सजाएँ काटकर जेलों से निकले, तब फिर नए सिरे से अपने अपने कार्यों में लग गए । गांधी जी जब जेल से बाहर आए, तो उन्होंने कांग्रेसियों के सामने हिन्दू-मुसलिम एकता, ग्राम संगठन, भ्रष्टोद्धार, किसान संगठन और अर्थात् तथा सादी प्रचार आदि रचनात्मक कार्य रखते । साखों लोग गांधी जी के आदेशानुसार इन कार्यों में लग गए । दास्त्री जी जब अपनी सजा पूरी करने जेल से बाहर निकले, तो वे भी इन्हीं कार्यों में भाग लेना चाहते थे । पर उनके हितियों ने उन्हें प्रेरणा दी कि वे अपनी अधूरी शिक्षा को पूरा कर लें । दास्त्री जी ने इसे ठीक ही समझा । क्योंकि जीवन-क्षण में सफलता प्राप्त करने के लिए ज्ञान के सम्बल की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है ।

दास्त्री जी ने अपनी अधूरी शिक्षा को पूरा करने के लिए बायीं विद्यापीठ में नाम लिखाया । उन दिनों काशी विद्यापीठ में स्वर्गीय डा० नगवानदास, स्वर्गीय नरेन्द्रदेव आचार्य, और डा० सम्पूर्णानन्द जैसे उद्भट विद्वान और दय भक्त अध्यापन का कार्य करते थे । दास्त्री जी का इन विद्वानों का सम्पर्क प्राप्त

हुषा । काशी विद्यापीठ के शान्त और पवित्र वातावरण में रहकर उन्होंने इतिहास दर्शन धर्मशास्त्र और समाजशास्त्र आदि विषयों की शिक्षा प्राप्त की । शास्त्री जी ने १९२५ ई० में काशी विद्यापीठ से 'शास्त्री' की उपाधि प्राप्त की ।

शास्त्री जी के सहपाठी श्री टी० एन० सिंह ने जो भाव कस केन्द्र में भारी इन्जीनियरिंग के मंत्री हैं शास्त्री जी के विद्यार्थी जीवन का चित्र इस प्रकार खींचा है— 'शास्त्री जो जैसा कि सभी लोग जानते हैं बदन में छोटे हैं । उस समय और भी छोटे थे । घर के सभी लोग उन्हें 'नन्हें' कहा करते थे । वे भी मानक क इस दोहे को बराबर दोहराया करते थे—

मानक मम्हे में रङ्गो जैसी नहीं दूब ।
घोर ऊख सुख आयगी दूब-दूब नी स्व ॥

यों तो हम सभी कमी न कमी कोई गीत या पद्य गुन गुमाते हैं मैंने शास्त्री जी को भी अक्सर उक्त दोहे को दोहराते हुए सुना है । ऐसा मान्य होता है कि उस समय उन्होंने निश्चय कर लिया था कि सारी जिन्दगी वह विनम्रता सर जता और सचाई से रहेंगे । काशी विद्यापीठ की विद्यार्थी सभा में वाद-विवाद के आयोजन हुआ करते थे । एक बार उसमें बड़े उद्योगों और कुटीर उद्योगों के सम्बन्ध में वाद-विवाद हो रहा था । उसमें वे (शास्त्री जी) बड़े उद्योगों के पक्षपाती थे, और मैंने छोटे उद्योगों का पक्ष लिया था । अब वह उद्योग

मन्त्री हुए तो उन्हें बड़े उद्योगों की देखभाल तो करनी ही पड़ी, पर उनका धोर बराबर छोटे उद्योगों पर ही रहा। उसके बाद कुछ ऐसी बातें हुई कि मैं योजना आयोग का सदस्य होने के नाते बड़े उद्योगों का समायन करने लगा। ऐसी बातों में जिन्दगी में उलट-फेर हुआ ही करते हैं। उन्होंने भी एक बार इसका डिक सेण्ट्रल एडवाइसरी बोर्ड की बैठक में किया था। वह मुझे अभी तक याद है। उसके बाद से मैंने भी योजना आयोग में अपना धम समझा कि जहाँ तक हो सके, छोटे उद्योगों का समायन करूँ।”

लोक-सेवक मण्डल के सदस्य

शास्त्री जी काशी विद्यापीठ की सर्वोच्च परीक्षा पास करने के पश्चात् जीवन-सत्र में प्रविष्ट हुए। उनके सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि वे धम अपने जीवन का ताना-बाना किस प्रकार सुनें। स्वर्गीय श्यामा साहपतराय जी बहुत पहले ही अपनी 'लोक-सेवक मण्डल' नामक संस्था का निर्माण कर चुके थे। इस संस्था का उद्देश्य उन राजनीतिक कामकाशियों का मासिक रूप में सहायता देना था, जो इस संस्था के सदस्य के रूप में प्राचीन देस-सेवा का शत करते थे। असहयोग आन्दोलन के पश्चात् सबड़ों-गहस्यों ब्यक्तियों ने मण्डल की सदस्यता स्वीकार करके देस-सेवा का सकस्य किया। शास्त्री जी का भी ध्यान मण्डल की ओर आकर्षित हुआ। उनके

मित्रों और हितैषियों ने भी उन्हें परामर्श दिया कि मण्डल की सदस्यता स्वीकार कर लें। शास्त्री जी को भी लोगों की राय उचित जैसी और वे सासा जी के पास गए। उन्होंने शास्त्री जी को मण्डल का सदस्य बना लिया।

शास्त्री जी मण्डल के सदस्य के रूप में लोक सेवा में प्रवृत्त हो गए। वे दलितों, अछूतों और किसानों मजदूरों की सेवा में लग गए। खादी और बच्चों के प्रचार में भी योग देने लगे। शास्त्री जी ने बड़ी निष्ठा और कमठता के साथ मण्डल के कार्यक्रमों की पूर्ति की। उन्होंने अपनी सचाई और अपनी लगन से मण्डल के सदस्यों में प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया।

शास्त्री जी मुजफ्फरनगर में

शास्त्री जी मण्डल की सदस्यता ग्रहण करने के पश्चात् मुजफ्फरनगर चले गए, और वहीं रहकर अछूतों और दलितों की सेवा करने लगे। उनके साथ उनकी माता जी भी मुजफ्फरनगर में रहती थीं। शास्त्री जी प्रायः अछूतोंद्वारा के सिससिसे में भेरठ सहारनपुर आदि स्थानों के दौरे किया करते थे। वे कई-कई दिन तक प्रायः दौरे पर रहा करते थे। श्री भक्तगुराय शास्त्री और श्री विविधनारायण शर्मा आदि कार्यकर्ता भी शास्त्री जी के साथ ही थे। शास्त्री जी की माता जी को कमी-कमी इन सभी लोगों का खाना भी भजाना पड़ता था। शास्त्री जी के घर पर प्रायः कार्यकर्ताओं का दल एकत्र हुआ करता

या । शास्त्री जी का सबके साथ बड़ा मेस-ओस और स्नहमय बर्ताव रहता था । सभी लोग शास्त्री जी की लगन उनके परिश्रम, और उनके प्रेम-गुण बर्ताव की प्रशंसा किया करते थे । शास्त्री जी ने थोड़े ही दिनों में अपने बर्ताव से सबको विमुग्ध कर लिया, और मुजफ्फरनगर जनपद के कार्यकर्त्तियों में उनका मुकम स्थान हो गया । पर कुछ दिनों के पश्चात् शास्त्री जी को इसाहाबाद बसा जाना पडा और इसाहाबाद ही उनका मुख्य कार्य क्षेत्र हो गया । इसे प्रकृति और दैविक शक्ति की प्रेरणा समझना चाहिए कि शास्त्री जी का कार्य-क्षेत्र प्रयाग हुआ, क्योंकि प्रयाग में ही शास्त्री जी को वे साधन और स्वर्ण भवसर प्राप्त हुए, जिनके कारण वे आज उत्तमि के दिक्कत पर पहुँच सके हैं ।

दीक्षा

शास्त्री जी के गुरु

शास्त्री जी में सदगुणों का विकास किस प्रकार हुआ— इसपर भी प्रकाश डालना उचित ही होगा। यह सच है कि शास्त्री जी में प्रकृत रूप से गुणों और विशिष्टताओं के अकुर से, पर यदि उन धंकुरों की योग्य, विद्वान और चरित्रनिष्ठ गुरुओं तथा प्राचार्यों के द्वारा देख-रेख न की गई हो तो यह समभव नहीं था कि उनसे इस प्रकार के फूल-फल निकलते। इसे भी शास्त्री जी के लिए प्रकृति की ओर से बरदान ही मानना चाहिए कि उन्हें अपने गुणों के विकास के लिए समय-

बीसा

समय पर विद्वान् गुरुओं और महान् पुरुषों का सम्पर्क प्राप्त
 होना गया। शास्त्री जी की प्रथम गुरु उनकी माँ है। सत्य
 निष्ठा आश्चर्य-विचार, सादगी और गीता के कमवाद में
 विश्वास की प्रेरणा उन्हें अपनी माँ से ही प्राप्त हुई है। परि-
 स्थितियाँ से जूझते और सकटों से न हारने का भाव भी
 उन्हें उन्हीं से ग्रहण किया है। उनकी ईश्वर भक्ति, व्रत
 और साधना ही शास्त्री जी के हृदय में सुष्ठता के रूप में
 प्रगट हुई है। स्वर्गीय पंडित निष्कामेश्वर मिश्र शास्त्री जी के
 द्वितीय गुरु हैं, जिन्होंने अपने सद्गुणों के साथ ही शास्त्री जी के
 जीवन को ढासा था। वे एक आदर्श अध्यापक थे। देश
 प्रेमा थे, त्यागी थे, और अरिनिष्ठ थे। वे अपने विद्यार्थियों
 का प्रायः देण प्रेम साहस और त्याग की कथाएँ सुनाया करते
 थे। उन विद्यार्थियों में शास्त्री जी भी थे, और उनपर पंडित
 निष्कामेश्वर मिश्र की अधिक कृपा भी थी। देश प्रेम, त्याग
 और कष्ट-सहिष्णुता की भावना का बिनाम उन्हीं का प्रयत्नों
 से शास्त्री जी में हो सका है। दर्शन और अध्यात्म की प्रेरणा
 भी शास्त्री जी को उन्हीं से प्राप्त हुई है।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द ने साहित्य
 में भी शास्त्री जी के लिए गुरु का ही काम किया है। पंडित
 निष्कामेश्वर मिश्र जी ने शास्त्री जी के हृदय में अध्यात्म
 और दान के जो प्रकुर सगाए थे, उनका विकास स्वामी
 विवेकानन्द के साहित्य के ही द्वारा हुआ। स्वर्गीय

भगवानदास के सम्पर्क ने उसे पत्नवित्त और पुण्यित किया। काशी विद्यापीठ में शिक्षा प्राप्त करते हुए उन्होंने डा० भगवानदास से बहुत कुछ ग्रहण किया—दर्शन का ज्ञान, चरित्र के प्रति दृढ़ता, सादगी और भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा आदि। डा० सम्पूर्णानन्द और स्वर्गीय नरेन्द्रदेव धार्याय का सम्पर्क भी उन्हें विद्यापीठ में हुआ। समाजवाद की प्रेरणा, और समाज में 'समान अधिकार' का भाव उन्होंने इन्हीं गुरुओं से ग्रहण किया है।

प्रयाग के क्षत्र में प्रविष्ट होने पर शास्त्री जी को स्वर्गीय राजा विपुलचन्द्रदास टण्डन का सहयोग प्राप्त हुआ। ईमान दारी, सच्चाई के लिए सचयें सादगी और भारतीय संस्कृति के लिए निष्ठा तथा हिन्दी प्रेम उन्हें टण्डन जी से ही प्राप्त हुआ है। गांधी जी के सम्पर्क में रहने का यद्यपि शास्त्री जी को भवसर प्राप्त नहीं हो सका है, पर गांधी जी के जीवन और उनके सिद्धान्तों ने उनके लिए अनन्य गुरु का काम किया है। गांधी साहित्य में शास्त्री जी को प्रगाढ़ निष्ठा है। गांधी जी के सिद्धान्तों और धार्यों के सन्धि में उन्होंने अपने को बाँटने का प्रयत्न किया है। वे अपने एक-एक कार्य को गांधी जी के सिद्धान्तों को ही सामने रखकर पूरा करते हैं। सत्य, अहिंसा संयम, देश प्रेम, कर्तव्य के लिए दृढ़ता, हिन्दू-मुस्लिम एकता, और आत्मिकता की प्रेरणा उन्हें गांधी जी से प्राप्त हुई है।

अपने जीवन काल के मध्य से ही शास्त्री जी भी नेहरू

जी के सम्पर्क में रह रहे हैं। अपने पिछले गुरुओं में, माँ को छोड़कर उन्हें सबसे अधिक श्री नेहरू जी के ही सम्पर्क में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उन्होंने श्री नेहरू जी के साथ कांग्रेस के कार्यों में ही भाग नहीं लिया बरन् उसके साथ दोरे क्रिये समा-गोष्ठियों में विचार विमर्श किया एक साथ बैठकर मंत्रणाएँ की और कभी-कभी निवास तथा खाने-पाने में भी भाग लिया। इस प्रकार उन्हें श्री नेहरू जी के गुणों और उनकी विशिष्टताओं को देखने जानने समझने और हृदयगम करने का अधिक प्रयत्न प्राप्त हुआ। विरोधी परिस्थितियों से जूझने मात्रात्मक एकता, धर्म-सुरक्षा की सुरक्षा, महान् राष्ट्रीय दृष्टिकोण और जाति-पाति तथा धर्म विहीन सर्वोपयोगी समाजवादी धारण की प्रेरणा उन्हें श्री नेहरू जी से ही प्राप्त हुई है।

इस प्रकार शास्त्री जी के व्यक्तित्व में गांधी और श्री नेहरू दोनों के ही गुणों और उनकी विशिष्टताओं का मिश्रण है। जहाँ एक ओर उनमें गांधी जी के सत्य अहिंसा ईमान-दारी और आत्मिकता के तत्व हैं वहाँ दूसरी ओर उनमें श्री नेहरू जी का जाति-पाति तथा धर्म-विहीन समाजवादी दृष्टिकोण भी मौजूद है। एक ओर जहाँ उनमें भारतीय संस्कृति और दान के लिए आस्था है, वहाँ दूसरी ओर मानव-संस्कृति के लिए अनुराग भी है। एक ओर जहाँ उनमें अपने कर्तव्य पालन के लिए दृढ़ता और आत्मिक के लिए निष्ठा है। वहीं

दूसरी घोर उममें क्रान्ति की चिनगादियाँ भी हैं। इस प्रा उम्होंने अपने ब्यक्तित्व के निर्माण में, गांधी जी घौर श्री ने के सिद्धान्तों से सत्य ग्रहण करके, उसे दोनों महाम् पुद्यों विधिदृष्टिाघों का केन्द्र बनाने का भरसक प्रयत्न किया है।



स्वर्गीय श्री द्वारका प्रसाद जी
(शास्त्री जी के पिता)

पूर्वज-परिवार

शास्त्री जी उत्तर प्रदेश, बाराणसी विभागतगत रामनगर के निवासी हैं। रामनगर काशी नरेश का निवास स्थान है, जो काशी के पास ही गंगा के उस पार, गंगा-तट पर स्थित है। शास्त्री जी के पूर्वज रामनगर के ही निवासी थे। शास्त्री जी के परदादा राजमोहनप्रसाद काशी नरेश के यहाँ दीवान थे। बाबा राजेश्वरप्रसाद और बीरेश्वरप्रसाद की भी समाज में अच्छी प्रतिष्ठा थी। शास्त्री जी के पिता का नाम श्री धारदाप्रसाद था। वे कायस्थ पाठशाला इलाहाबाद में अध्यापक थे। हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू में उनकी अच्छी गति थी।

वे एक कुशल अध्यापक होने के साथ ही साथ धार्मिक विचार के व्यक्ति थे। शिवजी में उनकी बहुत बड़ी निष्ठा थी। वे प्रतिदिन शिवजी के मन्दिर में जाकर नियम के साथ उनको पूजा किया करते थे। इसाहाबाद में वे प्रतिदिन गंगा-स्नान भी किया करते थे। वे प्रतिवर्ष माघ के महीने में कल्पवास भी करते थे। कभी-कभी वे मूसी में भी रहते थे। धार्मिक होने के साथ ही साथ वे बड़े परोपकारी भी थे। साधु-सन्तों की सेवा और गरीबों की सहायता में उनकी बड़ी रुचि थी।

कई वर्षों तक अध्यापन कार्य करने के पश्चात् उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया था और फिर तहसीलदार के पद पर उनको नियुक्ति हुई थी। पर दुःख है कि केवल २८ वर्ष की अवस्था में ही उनका स्वर्गवास हो गया। जिस समय उनका स्वर्गवास हुआ शास्त्री जी की अवस्था उस समय केवल ४६ वर्ष की थी।

शास्त्री जी की माता का नाम श्रीमती रामदुमारी है। इस समय उनकी अवस्था ८२ वर्ष के लगभग है। उनका पौद्धर, मिर्जापुर के गणेशगञ्ज में है। उनके पिता का नाम हजारीलाल था। हजारीलाल चार भाई थे। एक बहुत भी थी, जिसका नाम गंगादेवी था। हजारीलाल मुगलसराय में रेसल स्कूल में अध्यापक थे। शास्त्री जी का जन्म मुगलसराय में इन्हीं के घर में हुआ था।

शास्त्री जी की माता विद्युत् धार्मिक विचार की हैं।

इकतीस वय की प्रवस्था में ही वे सीमाग्य सुत से वधित हो गई। तब से लेकर आज तक वे तपस्विनी की भाँति ही अपना जीवन व्यतीत कर रही हैं। उन्होंने शास्त्री जी के पालन पोषण, धीर उनकी उन्नति में बड़े-बड़े संकटों और स्थितियों से सघर्ष किया है। उन संकटों और स्थितियों में 'राम' ही उनके एकमात्र आधार थे। 'राम' में उनकी प्रपार निष्ठा है। वे रात दिन राम की उपासना में सलग्न रहती हैं। साधु संतों की सेवा गरीबा की सहायता व्रत और गंगा स्नान ही उनका मुख्य कार्य है।

कदाचित् हो ऐसा कोई व्रत हा जिम वे न करती हों। बचपनी वय की प्रवस्था में भी अपना भोजन अपने हाथ से ही बनाती हैं। वे किसी दूसरे व्यक्ति के हाथ का बना हुआ भोजन ग्रहण नहीं करतीं। खान-पान में पवित्रता और एकांतता का वे अधिक महत्त्व देती हैं। वे खान-पान और भोजन के समय में आज के लोगों को पचभ्रष्ट मानती हैं। उनका कथन है कि खान-पान और भोजन के सम्बन्ध में स्वच्छता ही के कारण आज के समाज में माना प्रचार के रोगों का प्रारंभ है।

खान-पान और भोजन में नहीं ब एकांतता रखती हैं वहाँ वे सभी प्राणियों-मनुष्यों की उन्नति और कल्याण चाहती हैं। परिचित-अपरिचित चाहे कोई भी व्यक्ति उनके पास पहुँचकर जब उन्हें अपनी दुःख की कहानी सुनाता

तो वे बिना किसी सोच-विचार के उसकी सहायता करने के लिए उद्यत हो जाती हैं। कभी-कभी वे बड़-बड़े पेशवार मामलों में फँसे हुए लोगों के घाँसुओं पर भी द्रवित हो जाती हैं, और शास्त्री जी से उनकी सहायता करने के लिए कहती हैं। कभी कभी शास्त्री जी को उनकी इस उदारता से बड़ी परेशानी होती है, और उन्हें खीझकर कहना पड़ता है—“धर्मा मैं तो तुम्हारी उदारता से परेशान हो गया।” पर उनका बृद्ध हृदय कभी किसी का दुःख मुनते हुए नहीं सकता। किसी का दुःख दूर करने के पश्चात् उन्हें बड़ा सतोष और आनन्द होता है। वे यज्ञों, अनुष्ठानों और दत्त-उपवास से भी परोपकार को अधिक महत्त्व देती हैं। उनके परोपकार की एक कहानी सदा मेरे प्राणों में अमृत घोसती रहती है। मैं प्रायः उस कहानी को सोचता हूँ और मन ही मन कामना भी करता हूँ, कि काश समाज में इसी प्रकार सभी साग परोपकार को महत्त्व देते !

माघ का महीना था। प्रयाग में त्रिवेणी के तट पर माघ के मेले की घूम थी। शास्त्री जी की माता जी त्रिवेणी की रेली में एक भोपड़ी में रहकर कल्पवास कर रहीं थीं। मुझे यह बात पहले ही से ज्ञात थी। अतः मैं एक दिन अपनी धर्मपत्नी के साथ, उनके दयानार्थ, पता सगाकर उनकी कुटिया पर जा पहुँचा। पर वे वहाँ नहीं थीं। मुझे पता चला कि वे पास ही एक-दूसरी कुटिया में एक लड़की का तिसक बढ़ाने गई हैं। मुझे

घावभयं हुआ, और साथ ही उत्कण्ठा भी। मैं सोचने लगा, 'किसका तिसक कौन-सी सड़की।' मैं पता लगाकर उस कुटिया पर जा पहुँचा। देखा तो, सचमुच वहाँ तिसक का कृत्य पूरा किया जा रहा था। उन्होंने ही मुझे देखते ही घावर से बिठाया फिर तो उन्होंने मुझे उस तिसक का पूरा हास बताया, कि यह किस सड़की का तिसक है और उसकी माँ किस भाँति गरीबी के साथ घपना जीवन व्यतीत कर रही है। तिसक' समारोह के पश्चात् जिस प्रकार उस सड़की का उन्होंने वहीं विवाह किया—जिस प्रकार बारात घाई जिस प्रकार उन्होंने बारात का आबर-सत्कार किया और जिस प्रकार उन्होंने उस कन्या की विदाई की उसे देखकर मैं अवाक् हो गया। मैं अब तक परोपकारियों की अनेक कहानियाँ सुना चुका हूँ, पर यह पहली ही वास्तविक कहानी थी, जिसमें मैंने किसीको पराई कन्या के विवाह में अपनी कन्या के विवाह के समान ही खिसेत हुए देखा था।

दास्नी जी की माता जी सचमुच एक तपस्विनी हैं। जिस प्रकार एक तपस्विनी संयम और आचार-विचार की भाग में अपने शरीर को जसाते हुई नहीं चकती, वही हास उमका भी है। भयानक से भयानक शीत के दिनों में भी वे दिन में दो बार स्नान करती हैं। कार्तिक के महीने में वे, दिस्ती में रहने पर, यमुना जी के किनारे कुटिया लगाकर रहती हैं। उनकी कुटिया के लिए इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वह सचमुच

कुटिया होती है। माघ का महीना प्रारम्भ होते ही वे प्रयाग पहुँच जाती हैं और गंगा की रेती में महीने भर कल्पवास करती हैं। वहाँ भी उनकी कुटिया दर्शनीय होती है। धास्त्र्य की यात ही है कि उसी माघ मैसे में इसाहाबाद जिसे के अधिकारियों के कुटुम्बियों की कुटिया बड़े ठाठ-घाट की होती है, इतना ही नहीं उनके लिए अधिक स्थान करा जाता है पर देव के मन्त्री और प्रधान मन्त्री धास्त्री जी की माता केवल एक छोटी सी कुटिया में कल्पवास के दिन काट भेती हैं। वे कभी अधिकारियों पर यह भाव नहीं जताती कि वे धास्त्री जी की माँ हैं इसलिए उन्हें सुविधाएँ प्रदान की जाएँ। किसी के कुछ कहने पर वे यह कहकर उसकी जुबान बन्द कर देती हैं कि गंगा की रेती में एक न एक लोग धाकास क नीचे ही अपना दिन काट रहे हैं। क्या वे मनुष्य नहीं हैं ?

विवाह और गृहस्थ जीवन

विवाह

शास्त्री जी का विवाह मिर्जापुर के चेतगज नामक मुहल्ले में हुआ। उनकी धर्मपत्नी का नाम श्रीमती सखितादेवी है, उनका पिता का नाम श्री गणेशप्रसाद था। शास्त्री जी की वापस रामनगर से मिर्जापुर आई थी। दूम्हे के रूप में शास्त्री जी ने मिर पर और और वरीर पर बुझानार पामजामा तथा शेरवानी धारण की थी।

विवाह के पदवान् शास्त्री जी की धर्मपत्नी रामनगर गई। कुछ दिनों तक रामनगर रहकर वे शास्त्री जी के साथ

इलाहाबाद चली गई और फिर वे रामनगर गईं। रामनगर में ही ज्येष्ठ कन्या सुखी कुसुम का जन्म हुआ था। वे सबकी बच्चों, श्री हरेकृष्ण, सुखी सुमन श्री रामकृष्ण श्री मोहनकृष्ण और श्री गोपालकृष्ण की जन्मभूमि प्रयाग है। उसके पदधातु दासजी जी का यह छोटा परिवार इलाहाबाद चला गया और स्थायी रूप से इलाहाबाद रहने लगा। दासजी जी की धर्मपरनी श्रीमती जतितादेवी ऊँचे विचार की सहृदय महिला हैं। यद्यपि उन्हें हाई स्कूल और कालेज में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला है पर उनके हृदय में सभी बातों को समझने और ग्रहण करने की शक्ति है। वे ईश्वर भक्ति में सुन्दर पद रचना करती हैं। उनकी पद रचना में स्पष्टता उनसे हृदय की सुष्टता और भावमयता होगी है। गार्हस्थ्य जीवन के सञ्चालन में वे अधिक निपुण हैं। उनके ऊपर सब कुछ छोड़कर दासजी जी निश्चिन्त रहते हैं। वे एक योग्य और कुशल भारतीय महिला की भाँति ही पर जो व्यवस्था और शान्ति से सुन्दर बनाये रहती हैं। प्राधुनिक राजनीति का भी उन्हें ज्ञान है। वे प्राधुनिक राजनीति की गति-विधि से अपने को परिचित रखती हैं।

श्रीमती जतितादेवी गार्हस्थ्य जीवन में कुशल होने के साथ ही साथ देशभक्त भी हैं। वे खरूर के ही वस्त्रों का उपयोग करती हैं। दासजी जी के साथ उनके पुत्राब क्षेत्र में भी जाती हैं। सबसे दासजी जी का स्वास्थ्य खराब हुआ है वे छाया को भाँति ही उनके साथ रहती हैं। उन्होंने देश के लिए, देश



की स्वाधोनता के लिए यह-वड़े फट्टों का सामना किया है। उनका इसाहावाद का जीवन बड़ा ही तप और साधना का जीवन रहा है। पर मैं वे वृद्ध माना और छोटे-छोटे वस्त्रे। शास्त्री जी सबको राम भगोसे छोड़कर देव की सेवा में रत रहते थे। अब बन्दी बनाये जाते थे तो दा-दो यय तक जेलों में रहते थे। यद्यपि उन्हें 'मण्डन' की ओर में मासिक कृति मिलती थी, पर बहु कृति इतनी नहीं थी कि जिससे पर का याम-कात्र मुक्तहस्त होकर बलाया जा सकता। बहु तो शास्त्री जी को घमपत्नी और उनकी माता की ही कुदासता या कि वे उत्तने में ही अपना काम चला लेती थीं और किसी पर अभी प्रकट न होने देती थीं। जो लोग इस परिस्थिति में रह चुके हैं वही शास्त्री जी के परिवार की स्थिति और उनके कुटुम्बियों के धान्तरिक धैय का अनुमान लगा सकते हैं।

शास्त्रीजी जब जेल जाते थे तब स्वर्गीय राजपि पुरुषोत्तम दाम टण्डन (यदि बाहर होते थे) उनके परिवार की देख रेख करते थे। टण्डन जी का शास्त्री जी पर बहुत बड़ा स्नेह था। टण्डन जी भी जब जेल में होते थे तो उनके साथी-हितपी शास्त्री जी के कुटुम्ब की देख रेख किया करते थे। मेहन जी से सम्पर्क होने पर उन्हें भी शास्त्री जी के कुटुम्ब की चिन्ता होती थी। एक बार जब शास्त्री जी की माँ बीमार हुई थी, तो श्री मेहन उन्हें दाबने के लिए शास्त्री जी के घर भी गए थे, यद्यपि अभी श्री मेहन और शास्त्री जी पारस्परिक प्रीति

जन्म ही कारण कर रही थी पर फिर भी श्री नेहरू शास्त्री जी की कमठता और उनकी कार्य-क्षमता से उन्हें और उनके परिवार को अपने स्नेह और अपनी सहानुभूति से अत्रिचित करने लगे थे।

गृहस्थ जीवन

शास्त्री जी की धर्मपत्नी की धारणा विचार धर्म और पूजापाठ में बड़ी निष्ठा है। शास्त्री जी के घर में प्रति सोमवार को 'नाम सकीर्तन' समारोह इन्हीं की देन है। नाम सकीर्तन' के लिए उन्होंने 'घास मण्डली' का संगठन किया है। इस मण्डली में उनके घर के सभी कुटुम्बी और नोकर तथा उनके वास-अर्धे हैं। प्रति सोमवार को सब लोग एकत्र होते हैं और बड़े प्रेम से नाम सकीर्तन करते हैं। यद्यपि शास्त्री जी की धर्मपत्नी की मगवान शहर में बड़ी निष्ठा है पर वे 'राम' और 'श्रीकृष्ण' की पूजा-अर्चना में भी भाग लेती हैं। वे स्वयं मंत्र और कीर्तन बनाती हैं और सब से उनका गान करती हैं। उनके बनाए हुए मंत्रों की एक पुस्तक छप चुकी है और दूसरी दीर्घ ही प्रकाशित होने वाली है। वे प्रतिदिन समग्र बारह बजे तक मौन रहती हैं, और पूजा-पाठ तथा साधना में लगी रहती हैं।

शास्त्री जी की धर्मपत्नी के जीवन में दिव्योपायमा से सम्बन्धित अमत्कारण घटनाएँ भी घट चुकी हैं। यहाँ मैं एक

एसी ही घटना का उत्सर्ग करत आ रहा हूँ। इस घटना से जहाँ उनकी दिव्य निष्ठा पर प्रकाश पड़ता है वहाँ उससे इस बात का भी पता चलता है कि उनपर भी शिवजी की कृपा दृष्टि है— 'उनके वात्स्यायन्या की बात है। वे प्रायः अपनी माता के माथ स्नान के लिए जाया करती थीं और लौटते समय मन्दिर में शिवजी की मूर्ति को मगाजल से स्नान कराया करती थी। कुछ दिनों के पश्चात् उनके मन में अपने माथ ही यह विचार उत्पन्न हुआ कि हम क्यों न शिव-मूर्ति को अपने घर में अपने और तुलसी के पेड़ के नीचे रखकर उनकी पूजा किया करें। एक दिन उन्होंने अपने मन की बात अपनी माँ पर प्रकट की और माँ की सहमति पान पर शिव-मूर्ति को घर उठा ल यह शीघ्र प्रतिदिन प्रभ से पूजा अर्चना करने लगी।

एक बार शिवरात्रि के दिन उन्होंने ॐ नमः शिवाय मंत्र के मवासल आप का अनुष्ठान किया। आप आरम्भ हुआ गया। एक बार मंत्र अपने के पश्चात् वे अपने का एक लम्बा निवाल कर रख दिया करती थीं। सगमग ग्यारह वजे रात तक उनका आप चलता रहा। घर के सभी लोग निद्रा मग्न हो गए। चारों ओर सन्नाहटा छा गया। पर फिर भी बड़ मनायोग के माथ उनका आप आगे था। सहसा एक बहुत बड़ा माँप उन्हें अपने कमरे में रगता हुआ लिपिआई पड़ा। वे अपनी उम देव ही पाई थीं कि वह बामु के समान आकर उनका माथने उपस्थित हो गया और आपका पत्र पसाकर बैठ गया। वे अपने का संभाल न मकी—

भय से चीख उठीं । उनकी माँ ने दौड़कर कमरे में प्रवेश किया ।
 वे स्वयं कमरे से बाहर निकलती हुई बोसीं—“साप, बहुत बड़ा
 साप !” पर वह साप उन्हें छाड़कर घोर किसी को भी निलसई
 न पड़ा । वे सोमो के पूछने पर बार-बार सर्प की घोर सकेत
 करती थीं, पर वह सप उन्हें छोड़कर घोर किसी को निलसई
 न पड़ा ।”

उन्हीं दिनों से शास्त्री जी की धर्मपत्नी को शिवा-पूजा
 में निष्ठा भी बढ़ गई । इतनी अधिक निष्ठा और इतना अधिक
 दृढ़ विश्वास उनका शिवजी में हो गया कि वे अपनी शिव पूजा
 की शक्ति से बड़-बड़े सकटों को पार कर जाने की क्षमता की
 अनुभूति करने लगीं और इसमें सन्देह नहीं कि शास्त्री जी की
 सभी पिछली बीमारियों में उन्होंने शिवजी की शरण ग्रहण
 की और उन्हीं की कृपा से उनकी मया पार भी लग गई ।

शास्त्री जी के कुटुम्ब में उनके सड़के उनकी पुत्र वधु
 उनकी कन्याएँ और माती-पोते भी हैं । शास्त्री जी के बड़े
 सड़के यो हरेकृष्ण एक कुशल इन्जीनियर हैं । दोप तीन सड़के
 अपनी छोटी वय में ही और शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं । शास्त्री
 जी की कन्याएँ यद्यपि विवाहित हैं, पर वे उन्हीं के साथ रहती
 हैं । शास्त्री जी के कुटुम्बियों की अर्था करतें हुए उनके मोकर
 रामनाथ की अर्था न करना अनुचित होगा । रामनाथ भी
 सुटपन से ही परिवार की भूमि ही शास्त्री जी के साथ रहता
 है । सब ही उसके दास-बन्धे भी हैं, और वे सब भी शास्त्री

यो कामराज ने कई दिनों तक विचार-मगन किया। घस्त में उनकी दूरदर्शिता और उनकी अनन्य देश-सेवा-शक्ति ने उन्हें प्रेरणा दी कि वे शास्त्री जी के पक्ष में वातावरण तयार करें। पर फिर भी उन्होंने भी अपनी ओर से कुछ न कहकर निपय का भार संसदीय पार्टी के ही ऊपर छोड़ दिया। संसदीय पार्टी के सदस्यों ने भी कई दिनों तक विचारों का मगन किया पर सब इस विषय में एकमत थे कि भारत का कल्याण इसीमें है कि शास्त्री जी के हाथों में ही यह पतवार दी जाए, जिस नेहरू जी छोड़ गए हैं।

२ जून के प्रभात काल में संसदीय पार्टी की बैठक हुई और शास्त्री जी सर्वसम्मति से नेता चुने गए। सारे देश ने संसदीय पार्टी के इस निणय का हृदय से स्वागत किया और पार्टी के सदस्यों तथा कांग्रेस अध्यक्ष कामराज को उनकी इस सूझ-बूझ और धुद्धि चातुर्य के लिए उन्हें साधुवाद दिया। ६ जून को शास्त्री जी ने सपथ ग्रहण की और अपने मंत्रिमण्डल का गठन किया। आज वे भारत के प्रधान मंत्री हैं। स्वभावतः आज उन लोगों के मन-मानस में हर्ष की तरंगें रह रहकर उठ रहा होंगे जिनके साथ शास्त्री जी ने अपना बचपन व्यतीत किया है। कगोर व्यतीत किया है और व्यतीत की हैं अपनी दुःख की घड़ियाँ। उनका भी मन-मयूर आज आनन्द से नाचा पड़ता होगा जो उनके इलाहाबादी जीवन के साथी हैं—निकटवर्ती हैं। यही नहीं आज उन कोटि-कोटि गरीबों

घोर साधन बिहीन व्यक्तियों का मन भी प्रसन्नता से नाच उठा होगा जो यह समझते हैं कि गरीबी की गोद में जन्म लेने का कारण—साधनों का अभाव होने का कारण उनके बच्चों का अविद्य संघकारण है। शास्त्री जी न अपनी गौरवपूर्ण उन्नति से यह सिद्ध करके दिया दिया कि यदि बालक में विधिष्टता है, प्रतिभा है ध्यान बढ़ने की साम्प्रदाय है तो गरीबी उसके बरणों को नहीं बांध सकती—नहीं बांध सकती ! !

सास किले से

प्रधानमंत्री पद पर प्रतिष्ठित होने के पश्चात् शास्त्री जी ने १५ अगस्त को सासकिले के ठमर खड़े होकर प्रथम भाषण दिया है। उन्होंने अपने भाषण में अपनी मायी नीतियों पर प्रकाश डाला है। अतः उनका यह भाषण अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उनके इस भाषण से उनके व्यक्तित्व और बिचारों पर भी प्रकाश पड़ता है। इसी उद्देश्य से हम भी यही उपाय महत्वपूर्ण अंग 'हिन्दुस्तान' से उद्धृत कर रहे हैं— भारत सम्मान और गौरव के साथ किसी भी दंग से बातचीत द्वारा अपने विवाद हम करने को उद्यत है किन्तु अगर कोई अमकी घोर तन्वार के यत्न पर हमें झुकाना चाहेगा, तो हम अपनी सारी शक्ति से उसका मुनाबला करेंगे। चीन ने रूषि अपने रण में कोई परिवर्तन नहीं किया है इसलिए उनके प्रति हमारा भी रवैया कायम रहेगा।

‘घमो-घमो एक डेढ़ महीने से अन्न का सवाप कठिन बन गया है। खास तौर से कुछ भूखों में जो आपके पड़ोस में हैं—उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल और उत्तर-पश्चिम की तरफ जाएँ तो महाराष्ट्र और गुजरात राज्य और राजस्थान का एक हिस्सा में। लेकिन मैं आपसे कह सकता हूँ कि हमने उसका मुकाबला करने की पूरी कोशिश की है, बेबस बाहर के अनाज से नहीं। बल्कि अपने देश के उन सूबों से जहाँ अन्न वहाँ की उर्वरता से ज्यादा पैदा होता है। जम पंजाब उड़ीसा, मध्य और मध्य प्रदेश से अनाज हमने जल्दी-जल्दी उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, महाराष्ट्र और गुजरात भिजवाया है। इसमें वहाँ हासल सुधरी है। बीस दिन या एक महीने पहले वहाँ जो परेशानी थी वषनी थी यह अब कम है। अगले महीने-दो महीने में हमें और धन करना होगा। जिसके पास जितना है उससे वह ज्यादा खर्च न करे। हम अपने खर्च का अपना अन्न के खर्च को तो उससे भी घटाएँ। मैं चाहता हूँ कि हर एक घर का रहने वाला हर एक गाँव का रहने वाला अपने पड़ोसी का देखे कि वहाँ मुसीबत है कौन तकलीफ उठा रहा है। हमें अपने खाने में कुछ बचो करके भी दूसरे को खिलाना पड़े तो उसके लिए सपारा रहने की ज़रूरत है। बचकाँवर अपने अपने घरों में कुछ ज्यादा खर्च से यह बात मुनासिब नहीं है और मुझे विश्वास है कि हमें जिस सफट का मुकाबला करना पड़ रहा है उसमें हम हिम्मत

बहादुरी और दूरप्रदेशी से काम लेंगे ।

“ मैं यह समझता हूँ कि आज के उमाने में पहले दो तीन महीनों में न दावतों की छत्तरत है, न बिनास की छत्तरत है, न सभेस की छत्तरत है । मंत्री भी न कोई दावत मजूर करेंगे, न कहीं आयेंगे, न कोई दावत लेंगे, और न पार्टीज होंगी । मैं जानता हूँ कि हममें कोई बहुत बचत की बात नहीं है, फिर भी आज देश का एक मानस तयार करना है, देश का दिमाग तयार करना है और हमें यह दिलसामा होगा कि जो आज कमियाँ हैं उनका हम सब मिलकर दूर करने की कोशिश कर रहे हैं ।

‘ भ्रमणी मवास तो यह है कि हम अपने देश में ज्यादा भ्रमाज पदा करें । इसके लिए हमने जो कदम उठाने का इरादा किया है हम जिस तरह से किसानों के भ्रमाज की शीमत बढ़ाना चाहते हैं, जिस तरह से किसानों का बगर मुसीबत पहुँचाए सरकार उनसे भ्रमाज खरीदना चाहती है और हम जो दूसरी बातें करना चाहते हैं, मुझे विश्वास है कि उनकी बशीमत पहले वर्ष-दो वर्ष के भ्रन्दर हम अपनी हानत ऐसी बना सकेंगे जिसमें आज जहाँ स्थिति का हम मुभावसा न करना पड़े ।

‘ हमें यह भी ध्यान में रखना है कि ज्यादा भ्रमाज पदा होगा—माद देने से पूरी तरह पानी बन स, या किसानों को कर्जा देने से या अच्छे बीज और अच्छे जानवरों के कारण,

लेकिन घसती ताकत तो दिनों में रहती है। आज करोड़ों किसान अगर यह इरादा कर लें कि हम एक आन्दोलन के रूप में खेती की पदावार का बढ़ायेंगे तो समय बदल सकता है हालाँकि बदल सकती है। कुछ हमें गाँधी जी की भावना को धरना होगा। जब हम आन्दोलन बसाते थे गाँधी-गाँधी में जाते थे। इस समय भी इस बात की जरूरत है कि हम गाँधी में जाएँ खेत-खेत पर जाएँ। हम अपने ऊपर यह जिम्मेदारी उठावें कि देश के अन्दर गाँधी के अन्दर किसानों में ज्यादा से ज्यादा अनाज पदा वरने का एक आन्दोलन बसा देंगे। मैं चाहता हूँ कि हम सब आज इस भावना से प्रेरित हों।

‘ और भी दूसरे सवाल हैं। मैं किसी चीज को भाप से छिपाकर और दबाकर रखना नहीं चाहता। आज कीमतें बढ़ रही हैं मूल्य बढ़े हुए हैं। जरूरी सामान भी ज्यादा कीमत पर मिलता है। कपड़ा है तेज है चीनी है, गुड़ है दियासलाई है—छोटी-मोटी ऐसी चीजें जो हमारी रोज की जिंदगी में काम आती हैं, उनके भी दाम बढ़े हुए हैं और उछल पसर किसान पर भी पड़ता है। उसपर भी हमें रोक लगानी होगी। मूल्य वृद्धि के पीछे कुछ मौलिक बातें—हमारी आर्थिक नीतियाँ हैं।

‘ हमने पिछले १५ साल के अन्दर तीन प्लानों में २० हजार करोड़ रुपये खर्च किए हैं, और खर्च करने का इरादा रखते हैं। क्या हम कभी कल्पना कर सकते थे कि इस देश में

इस दस-बारह साल के अंदर इतना खर्च कर लेंगे। लेकिन जब हम खपवा लगाते हैं तो उसी के अनुसार हमें पदा भी करना चाहिए। अगर खपवा लगाने के साथ-साथ हमारी पैदावार न बढ़े य मोट बढ़ी मात्रा में फलते हैं। इससे कीमतें बढ़ती हैं। आज ऐसी हालत आ गई है जब हमें साधना पड़ेगा कि इन कीमतों की बढ़ती पर काबू पाने के लिए हम क्या कदम उठाएँ। इसमें कोई पीछ हटान की बात नहीं लेकिन मजबूत काम उठान की बात है। हमारा मस्य एक ही है। हम वही पढ़ेंगे—एक नया समाज एक प्रातिपदी समाज हमें बनाना है। लेकिन हमारा हर कदम मोबा हुआ समझा हुआ और एक मजबूती के साथ बढ़ना चाहिए। मुझे विश्वास है कि आज जो हमारा साधारण आर्थिक परिस्थिति है सरकार उसे अच्छी तरह से मोषेगी और हम एक रास्ता निकालेंगे, जिस रास्ते में हम ठीक-ठीक आगे बढ़ सकें और आज जो बढ़ती हुई कीमतें हैं उनपर भी काबू पा सकें।

अपने देश में अगले कुछ सालों के अंदर मैं देखना चाहता हूँ कि जरूरी सामान की कीमतें बँधी हुई हों। जो पैदावा बढ़ी मूलमूलतः खोई है उनपर जो जितना पसा खप करता चाहे करे, और जो कीमतें रहें वह रहें। लेकिन मुझे इस बात की चिंता है कि आज गरीब आदमी, साधारण आदमी आ सके, पहन सके रह सके, और साथ ही साथ उसको एसी जरूरी खोई, जिसका मैंने थोड़ा जिक्र किया, उसको मिल सकें

घोर उनकी कीमतें बँधी रह सकें। एक-एक दूकान पर कीमतों की सूची टँगी रहे और यह सरकारी अफसरों का काम होगा कि वे यह देखें कि वे कीमतें ठीक होती हैं और उनके अनुसार काम चलता है।

यसे अपने देश में हमें पड़ोसी देशों की पहले फिर करनी है और जितनी हम अपने देश में शांति रख सकें और उसकी वजह से दुनिया में शांति बनाये रख सकें वह एक बहुत ही जरूरी बात है। चीन का हमला हमारे देश पर हुआ। उसका रुख नहीं बवसा है हम भी अपना रुख नहीं बदल सकते। इरबत और सम्मान के साथ बातचीत करने से हमारा देश कभी पीछे नहीं हटा है। क्या गाँधी जी, और क्या जवाहरलाल जी, हमारा यह तरीका रहा कि चाहे हमारा कोई कितना हो विरोधी या मुत्सामिफ क्यों न हो अगर वह बात करता चाहे तो हम क्षान और मर्यादा के साथ बात करने को तयार हैं लेकिन अगर तसवार की मोक पर या एटम बम के डर से कोई हमारे देश को झुकाना चाहे, बजाना चाहे तो यह देश बधने वाला नहीं है। हमारी करोड़ों की ताकत जनता की ताकत इतनी जबरदस्त है कि हम किसी भी सतरे का मुकाबला कर सकते हैं।

‘मुझे बड़ी खुशी है कि राष्ट्रपति प्रसूब ने एक बड़ी बख्शी भावना का प्रसार किया है अच्छे सयासात बाहिर किए हैं। कस हो आपने अखबारों में देखा होगा कि उन्होंने

भारत और पाकिस्तान की एकता और मेल-जोस की बात की है। मुझे उससे खुशी है और मैं उसका स्वागत करता हूँ। मैं भी चाहता हूँ और देश भी चाहता है कि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान में मेल रहे। घामे दिन रोज़ झगड़ होते हैं सरहदों पर गोलियाँ बसती हैं। यह न पाकिस्तान के लिए अच्छा है और न हिन्दुस्तान के लिए। लाखों भाई भ्रमर इधर से उधर आएँ और हम इसे रोक न सकें तो हमारे लिए यह कोई गौरव की बात नहीं है। इसलिए मेल और समझौता जसा कि मैंने कहा आदर और सम्मान के साथ एक दूसरे की बात को समझकर हम कोई रास्ता निकालना चाहें तो उस भी निकालना चाहिए। मुझे भरोसा है कि अगले कुछ महीनों में हम अपनी बातें कर सकेंगे और मेल-जोस की एक ऐसी भावना पैदा कर सकेंगे जिससे एक रास्ता—ठीक रास्ता निकल आए।

‘ हमारे पड़ोस में हमारा प्रेम बर्मा से है सका से है नेपाल से है और अफगानिस्तान से है। ये सभी हमारे मित्र देश हैं। कुछ बठिनाइयाँ बनी-कनी आ जाती हैं। कुछ सना में भी हैं बर्मा में भी हैं। हमें खुशी है कि मोसोन की प्रधान मन्त्री ने यहाँ अक्टूबर के महान में आना मजूर किया है। सना में हिन्दुस्तानियों का आ प्रदन है मुझे भरोसा है कि उस हल करने में हम कामयाब होंगे। हमारे विष्णु मन्त्री मरदार स्वर्णसिंह जी बर्मा जा रहे हैं और मैं समझता हूँ कि वहाँ आज

जो कठिनाइयाँ और विकल्प हैं, उनको भी हस करने में हम कामयाब होंगे।

‘ दुनिया में शांति का रास्ता जवाहरलाल भी ने दिखाया और आज भी हम दुनिया में शांति कायम रखने में अपनी सारी ताकत लगाएंगे। हमारी नीति किसी बड़े धर्म के साथ नहीं रहने की है। हमारी नीति चाहे नान असाइनमेण्ट की हो, चाहे को-एजिसटेंस की हो चाहे ब्रिच ग्राममिण्ट की हो, चाहे एष्टीकानोनियमिजम की हो या एष्टी रेचिममिजम की हो, हम उपनिवेश नहीं चाहते। हम पुतगाल की कासोनीज को मिटाना चाहते हैं। हम नहीं चाहते कि वे कायम रहें। हम कासे और गोरे के रंग को बर्दाश्त नहीं करना चाहते, चाहे वह सारथ अफ्रीका में हो या कहीं और हो। हम नीति पर अड़े रहेंगे, जो सच है। हम सच्चाई का साथ देंगे।

‘ दुनिया में हमारी बड़ तमी होगी जब हम अपने देश में मजबूत हों, जब अपने देश में हमारी ताकत हो और जब हम अपने देश में गरीबी को मिटा सकें। हमारे अन्दर मेहनत और एकता जरूरी है। अगर हम साम्प्रदायिक झगड़ों में पड़े, अगर हम भाषा और बवान के आपसी झगड़ों में पड़े तो हमारी ताकत में बाधा पड़ेगी।

“ मैं नहीं कहता कि कोई विरोधी दल सरकार की आलोचना न करे, बरकर करे। सरकार की जितनी बुराई करनी चाहे एक लोकतंत्रीय ढंग से करे। हम उसका स्वागत

है। लेकिन कुछ ऐसा बचत भी घाटा है, कोई ऐसा सवास
 ता है जिसमें सारा देश सारा राष्ट्र और सारी पार्टियाँ
 एक साथ होती हैं और मुल्क के सवासों को हस करती
 जाने का सवास कोई ऐसा सवास नहीं है जिसको हम
 की बुनियाद पर हस करने की कोशिश करें। मैं इस
 को अपने तमाम साथियों पर छोड़ना हूँ कि वे इस पर
 और विचार करें। लेकिन इतना आपसे निवेदन है कि
 एकता—देश की एकता को बनाए रखकर अपना
 समाज बनाकर अपने समाज में शान्ति करके हमको
 देश को मजबूत बनाना है और तभी हम दुनिया में
 शान्त बन सकेंगे।

“ यह खाना-पीना, पहनना सब खरबी है लेकिन देश
 का है—केबल धन-दीसत से नहीं। खपया-पैसा होते हुए भी
 पीछे रहते हैं, दुनिया की मजदूरों में—और अपनी नजरों
 देश कैसे बनता है—देश बनता है गांधी जैसे आदमियों से,
 हरसास जैसे आदमियों से रवीन्द्रनाथ टगोर जैसे
 व्यक्तियों से। इसमें क्या बात थी? उनमें एक चरित्र था,
 सतिशक्ता थी। अगर आज हम चाहते हैं कि हमारा देश
 भी बढ़े तो फिर ऐसे मौजवानों को जन्म लेना होगा जो
 और अनुशासन को अपने सामने रखेंगे, तो देश का
 विकास उज्ज्वल होगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

“ मैं इतना ही आपको बिरवास दिसाना चाहता हूँ,

जो कठिनाइयाँ और विषयों हैं, उनको भी हस करने में हम कामयाब होंगे।

दुनिया में शांति का रास्ता जवाहरलाल जी ने दिख साया और आज भी हम दुनिया में शांति कायम रखने में अपनी सारी ताकत लगाएँगे। हमारी नीति किसी बड़े शक्ति के साथ नहीं रहने की है। हमारी नीति चाहे नान असाइनमेण्ट की हो चाहे को-एक्जिस्टेंस की हो, चाहे डिस ग्राममिण्ट की हो, चाहे एण्टीकॉमिनिस्म की हो, या एण्टी रेसियलिस्म की हो हम उपनिवेश नहीं चाहते। हम पुर्तगाल की कॉलोनीज को मिटाना चाहते हैं। हम नहीं चाहते कि वे कायम रहें। हम कासे और गोरे के रंग को बर्दाश्त नहीं करना चाहते, चाहे वह साउथ अफ्रीका में हो या कहीं और हो। हम नीति पर बड़े रहेंगे जो सच है। हम सपनाई का साथ देंगे।

“दुनिया में हमारी कद्र तभी होगी जब हम अपने देश में मजबूत हों, जब अपने देश में हमारी ताकत हो और जब हम अपने देश में गरीबी को मिटा सकें। हमारे अन्दर मेस और एकता जरूरी है। अगर हम साम्प्रदायिक भगडों में पड़े, अगर हम भाषा और जवान के प्रायसी भगडों में पड़ तो हमारी ताकत में बाधा पड़ेगी।

“मैं नहीं कहता कि कोई बिरोधी दल सरकार की आलोचना न करे जरूर करे। सरकार की जितनी घुराई करनी चाहे एक लोकतंत्रीय ढंग से करे। हम उसका स्वागत

कि हम विज्ञान के लिए कोई काम नहीं करेग। हमें अपनी कामयाबी और सफलता का पूरा भरोसा है। मैं इतमीनान से कहता हूँ कि हम देश के काम को आगे बढ़ाएँगे तेजी से बढ़ाएँगे मजबूती से चलाएँगे और देश के प्रश्नों को हल कर भारत को दुनिया में एक ऊँचा से ऊँचा स्थान दगे।”

शास्त्री जी का यह भाषण उन्हीं के अनुकूल है। उन्हीं के शब्दों में देश के जन-जन को भरोसा है कि वे देश के काम को आगे बढ़ाएँगे—बढ़ता के साथ आगे बढ़ाएँगे।

उनके साथ साधना की शक्ति है। हम तो उसी में विश्वास करते हैं और उसी के बल पर कहते हैं कि वे अक्षरशः देश के काम को आगे बढ़ाएँगे—नेहरू के स्वप्न को पूरा करेंगे।



